शोध सरोवर पत्रिका

आरती, वषुतक्काटु, तिरुवनन्तपुरम - 695 014, केरल राज्य।

RNI No. KERHIN/2017/70008 ISSN No. 2456-625 X

वर्ष 3 अंक 10 त्रैमासिक हिन्दी शोध पत्रिका 10 अप्रैल 2019

मुख्य संपादक

डॉ.पी.लता

प्रबंध संपादक

डॉ.एस.तंकमणि अम्मा

सह संपादक

प्रो.सती.के

डॉ.एस. लीलाकुमारी अम्मा

श्रीमती वनजा.पी

संपादक मंडल

प्रो.एस.कमलम्मा

डॉ.जी.गीताकुमारी

डॉ.गिरिजा.डी

डॉ.बिन्दु.सी.आर

डॉ.षीना.यू.एस

डॉ.सुमा.आई

डॉ.एलिसबत्त जोर्ज

डॉ.लक्ष्मी.एस.एस

डॉ.धन्या.एल

डॉ.कमलानाथ.एन.एम

डॉ.अश्वती.जी.आर

सूचना : पत्रिका में प्रकाशित रचनाओं में व्यक्त विचार संबंधित लेखकों के हैं। उनसे संपादक तथा प्रकाशक का सहमत होना आवश्यक नहीं है।

इस अंक में

संपादकीय	:	3
कृष्णा सोबती :अन्दाज़े बयाँ और	: डॉ. शशि मुदीराज	6
समय और सयानेपन की दास्तान	: बिन्दु वेलसर	12
कृष्णा सोबती और 'ज़िंदगीनामा'	: डॉ.एस.लीलाकुमारी अम्मा	17
कृष्णा सोबती की कहानियों में बाल मनोवैज्ञानिकता	: डॉ. सुधा.ए.एस	20
समय एवं समाज की लेखिका	: डॉ.जी.चन्द्रवदना	24
'यारों के यार' में दफ्तरी माहौल	: डॉ. बिन्दु सी आर	26
हिन्दी की सौंधी महक कृष्णा सोबती	: डॉ.रंजीत रविशैलम	29
कृष्णा साबती की कहानी 'दादी अम्मा' में चित्रित वृद्ध जीवन	: डॉ.लक्ष्मी.एस.एस	31
'ऐ लड़की' में मनोविज्ञान	: डॉ.धन्या.एल	34
मानवीय संबन्धों में मूल्य ह्रास:'सिक्का बदल गया' कहानी के विशेष संदर्भ में	: विजयलक्ष्मी.एल	38
'ज़िंदगीनामा' एक परिचय	: डॉ.सौम्या वी.एम	41
शिवनाथनी : अनुपम व्यक्तित्व	: डॉ.पी.लता	43
कृष्णा सोबती और देश विभाजन से जुड़ी कहानी	: डॉ.एलिसबत्त जोज	46
प्रलय प्रकोप	: अनामिका अनु	48
सही उत्तर चुनें	: डॉ.पी.लता	16,19,37,40
श्रद्धांजलियाँ	:	28,42,49

लेखकों से निवेदन

भाषा, साहित्य, समाज एवं संस्कृति पर लिखी गयी स्तरीय मैलिक तथा अप्रकाशित रचनाएँ भेजें। प्राकशनार्थ अनूदित रचनाओं के साथ मूल लेखकों से प्राप्त सहमति पत्र भी भेजें। रचनाएँ डी.वी.सुरेख ई.एन फोण्ट में वर्ड या पेजमेकर फाइल में भेजें। रचना के अंत में अपना पूरा डाक पता, मोबाइल नंबर और ई-मेल पता भी अंकित करें। संक्षिप्त जीवन-परिचय और फोटो भी भेजें।

संपादक

डॉ.पी.लता

शोध सरोवर पत्रिका

मूल्य : एक प्रति रु. 30/-

वार्षिक शुल्क रु.120/-

सहकर्मी पुनरवलोकन समिति :

डॉ.एच.परमेश्वरन

डॉ.टी.के.नारायण पिल्लै

डॉ.के.श्रीलता

पत्रिका के संबंध में अधिक जानकारी केलिए संपर्क करें - डॉ.पी.लता (संपादक, शोध सरोवर पत्रिका; मंत्री, अखिल भारतीय हिन्दी अकादमी), आरती, टी.सी. 14/1592, फोरस्ट ऑफीस लेन, ई-28, वषुतक्काटु, तिरुवनन्तपुरम - 695 014, केरल राज्य। फोन : 0471 - 2332468, 9946253648

ई-मेल : akhilbharatheeyhindiacademy@gmail.com

वेबसाइट : www.shodhsarovarpatrika.co.in

संपादकीय

कृष्णा सोबतीः अनुपम साहित्यिक व्यक्तित्व

साठोत्तर हिन्दी कथा लेखिका श्रीमती कृष्णा सोबती पर इसके पहले मैं ने लिखा है, सोत्साह और सानंद। कृष्णाजी 53 वें ज्ञानपीठ पुरस्कार से सम्मानित हुईं तो 'शोध सरोवर पत्रिका' का 'मुख चित्र' उनका था तथा 'संपादकीय' उनकी साहित्यिक उपलब्धियों पर था। इस बार उन पर कुछ लिखने को कलम चलाना शुरू किया तो यही अनुभव हुआ कि कलम मेरी उंगलियों पर नहीं नच रही है। यह शायद मेरी प्रिय कृष्णाजी के गुज़र जाने की निराशा से उद्‌भूत मन की अशक्तता या दुर्बलता से हो।

कृष्णाजी मेरेलिए एक लेखिका मात्र नहीं थीं। उनकी मुस्कान, वत्सल बोलचाल, भाषाई संस्कार, पांडित्य, वेशभूषा, सूझ बूझ सब ने मुझे लुभा लिया था। अनुपम व्यक्तित्व की धनी कृष्णाजी की जब फोन पर आवाज़ सुनती थी या उनका वाट्स आप सन्देश पाता था तब मुझे एक अनिर्वाच्य आनंद महसूस होता था। फोन पर बोलते वक्त वे एक लेखिका के परे मेरे परिवार की हितैषी बनती थीं। उनका ऐसा स्नेह तथा मिलनसार व्यक्तित्व महसूस करने का सैभाग्य मेरे जैसे ही उनके सभी परिचितों को प्राप्त हुआ होगा।

18 फरवरी 1925 को कृष्णा सोबतीजी का जन्म गुजरात के जिस भूभाग में हुआ वह विभाजन के समय पाकिस्तान का अधीनस्थ प्रांत हो गया। कृष्णाजी ने अपनी प्रिय भारतभूमि को ही रहने के लिए चुना। 25 जनवरी 2019 को सुबह 8.00 बजे 94 साल की आयु में हिन्दी साहित्य जगत् को मातृस्थानीय या दादी-परदादी स्थानीय रही कृष्णाजी का देहांत हुआ। उनका सामाजिक और साहित्यिक व्यक्तित्व ऐसा था कि वे तन-मन - धन से दलितों, पीड़ितों तथा पराधीन नारियों के उत्थान के लिए अड़ी रहीं। नारी जीवन के सभी पहलुओं पर, चाहे वह नैतिक या लैंगिक ही हो उन्होंने तूलिका चलायी। दाम्पत्य जीवन में स्त्री की अतृप्ति का कारण 'मित्रो मरजानी' उपन्यास की नायिका सुमित्रावंती या मित्रो के चित्रण के ज़रिए पाठकों को समझाया। पुरुष वर्चस्ववाले समाज में छोटी आयु की लड़की पर होनेवाला बलात्कार तथा उसका कुपरिणाम 'सूरजमुखी अंधेरे के' उपन्यास की नायिका रत्तिका के अनुभवों द्वारा चित्रित किया। स्वतंत्रता-पूर्व पश्चिमी पंजाब का जन-जीवन चित्रित करनेवाला आंचलिक उपन्यास है 'ज़िन्दगीनामा'। स्वतंत्रता - संग्राम के संकटकालीन समय में अपने ननिहाल से छिटकी तथा सब कहीं चुपचाप शारीरिक शोषण सहनेवाली किशोरी पाशो की कथा है 'डार से बिछुड़ी'। बिन अपनी बेटी पाशो के भविष्य की चिंता किये, उसकी माँ शेख की ऊँची हवेली में जा विराजी है। 'यारों के यार' में कार्यालयों में अपना अस्तित्व बनाये रखने केलिए कामकाजी महिलाओं द्वारा पुरुषों के सामने की जानेवाली करतूतों, कर्मचारियों के जीवन से जुड़ी छोटी-बड़ी बातों आदि का मनोवैज्ञानिक चित्रण किया गया है। 'तिन पहाड़' उपन्यास में विदेश में गये अपने प्रेमी की वहाँ शादी संपन्न होने का पता

चलने पर अकेलापन से उत्पीड़ित आधुनिक नारी जया की डार्जिलिंग में आत्महत्या करने की कथा है। 'दिलो दानिश' उपन्यास में अपनी पत्नी तथा बच्चों के रहते परस्त्री संबन्ध करनेवाले स्वार्थी पुरुष की असलियत का चित्रण है। 'ऐ लड़की' उपन्यास में मृत्युशय्या में पड़ी बूढ़ी माँ की बीती ज़िन्दगी की स्मृतियाँ, उनकी जिजीविषा, अपनी बेटी के अविवाहित रहने का उनका दुःख आदि प्रमेय हैं। 'समय सरगम' में बुढ़ापे में ज़िन्दगी का आस्वादन करनेवाले बुजुर्गों की कथा है। विवाहपूर्ण प्रेम-संबंध, विवाहोपरांत परप्रेम संबन्ध, त्रिकोण प्रेम, स्वार्थ, अहं, अकेलापन, भारतीय संस्कृति का संरक्षण जैसे तत्कालीन समाज का यथातथ्य चित्रण कृष्णाजी की कथा-रचनाओं में परिलक्षित होता है।

कृष्णाजी की विविध विधाओं में पुस्तकाकार में प्रकाशित रचनाएँ हैं - उपन्यास : डार के बिछुड़ी (1958), मित्रो मरजानी (1967), यारों के यार (1968), तिन पहाड़ (1968), ज़िन्दगीनामा (1979), ऐ लड़की (1991), दिलो दानिश (1993), समय सरगम (2000), जैनी मेहरबान सिंह (2007), गुजरात पाकिस्तान से गुजरात हिन्दुस्तान (2017, आत्मकथात्मक उपन्यास), चन्ना (2019) आदि; कहानी : बादलों के घेरे (1980; 24 कहानियों का संकलन), संस्मरणः हम हशमत -1 (1977), हम हशमत -2 (1999), शब्दों के आलोक में (2005), हम हशमत -3 (2012), मार्फ़त दिल्ली (2018), हम हशमत -4 (2019); साक्षात्कार : सोबती - वैद संबन्ध (2007), लेखक का जनतंत्र (2018), यात्रावृत्तः बुद्ध का कमण्डल लद्दाख (2012), आलोचना : 'मुक्तिबोध - एक व्यक्तित्व सही की तलाश में' (2017) आदि। सन् 1952 में लिखा गया उनका पहला उपन्यास 'चन्ना' मात्र सन् 2019 में प्रकाशित हुआ। कृष्णाजी ने सामाजिक विडंबनाओं के खिलाफ़ साहसिकता के साथ अपनी आवाज़ बुलंद की।

पिछले दो सालों से कृष्णाजी शारीरिक अस्वास्थ्य के कारण बीच-बीच में दिल्ली के अस्पताल में भरती होती थीं। 25 जनवरी 2019 को सुबह 8.00 बजे हिन्दी प्रगतिशील कथालोक के आलोक रही कृष्णाजी का भौतिक अस्तित्व सदा केलिए अस्त हुआ। बुढ़ापे में ही सही अपनी प्रिय कथा लेखिका के गुज़र जाने की यह खबर हिन्दी साहित्य प्रेमियों को दुःखद ही थी।

कृष्णाजी के जीवनसाथी शिवनाथजी बड़े ज्ञानी और बहुभाषा पंडित थे। कृष्णाजी जैसे ही उनका भी जन्म 18 फरवरी 1925 को हुआ। वे कृष्णाजी के 'ऐ लड़की' उपन्यास के अंग्रेज़ी अनुवादक हैं। अनुवाद का नाम है 'Listen Girl'। कृष्णाजी के समान उनका व्यक्तित्व भी चाहे लेखक जैसा हो, व्यक्ति रूप में हो या शासक के तौर पर हो बड़ा विलक्षण रहा। पाँच साल पहले वे गुज़र गये। उस दिन उनका दिवंगत होने का समाचार पाकर सचमुच मैं चकित हुई थी। क्योंकि वे हमेशा स्वस्थ दीखते थे। कृष्णाजी के ज़रिए शिवनाथ जी मेरे पति के भी इष्ट मित्र बने थे। फोन पर बोलने की रीत से मुझे दोनों की घनिष्ठता महसूस होती थी। पहले शिवनाथ जी चल बसे, अब हमारे हिन्दी परिवार की परम श्रद्धेय कृष्णाजी भी। दिल्ली में मयूर विहार, फेस-1 का उनका अपार्टमेंट 'पूर्वाशा' शून्य हो गया है। कृष्णाजी के निधन से बड़ा भारी नुकसान सुदूर दक्षिण के हम केरलीयों को प्रतीत हो रहा है तो दिल्ली में उनके सगे सबन्धियों का क्या हाल होगा? केरल की

राजधानी तिरुवनन्तपुरम में कार्यरत 'अखिल भारतीय हिन्दी अकादमी' के सदस्यों ने 9 फरवरी 2019 के पूर्वाहन 10.00 बजे को अपनी प्रिय कथा प्रणेत्री कृष्णा सोबती की याद में एक शोक सभा का आयोजन किया तथा हिन्दी साहित्य को उनकी अनूठी देन का स्मरण करते हुए दिवंगत आत्मा को श्रद्धांजलि अर्पित की।

हिन्दी की सशक्त लेखिका कृष्णाजी, जिन्होंने विविध माहालों, जैसे - पारिवारिक, दफ़्तरी, पहाड़ी, ग्रामीण, शहरी आदि - पर नारी विषयक कथा रचनाएँ कीं तथा जिनके लेखन का उद्देश्य मुख्यतः स्त्री-शाक्तीकरण था; आंचलिकता, आधुनिकता तथा उत्तराधुनिकता की दृष्टि से जिनकी लिखाई का विश्लेषण किया जा सकता है, वे ही छूट गयी हैं। यह सही है कि कृष्णाजी की भौतिक उपस्थिति आगे हमारे साथ नहीं होगी, किन्तु अपने साहित्यिक व्यक्तित्व की, अपने हियाव की, अपनी मदं मुस्कान की अमिट छाप छोड़कर ही वे गुज़र गयी हैं। भारत के सीमित भूभाग की 'बोली' मात्र रही खड़ीबोली हिन्दी व्यापक होकर 'विश्व भाषा' हो गयी है। जो हिन्दी अमरता हासिल कर चुकी है, उसका साहित्य ज़िन्दादिल ही रहेगा और उसकी लेखिका कृष्णाजी सदा स्मृत भी रहेंगी।

संपादक

डॉ.पी.लता

♦ मंत्री, अखिल भारतीय हिन्दी अकादमी
(पूर्व अध्यक्षा, हिन्दी विभाग,
सरकारी महिला महाविद्यालय)
तिरुवन्तपुरम, केरल राज्य।
फोन : 9946253648

कृष्णा सोबती के सन्देश

प्रेम वो चीज़ है.... जो
इंसान को कभी मुरझाने नहीं देता
और नफ़रत वो चीज़ है, जो
इंसान को कभी खिलने नहीं देती।

- - - - - - - -

प्रभु का रास्ता बड़ा सीधा है
और बड़ा उलझा भी....
बुद्धि से चलो तो बहुत उलझा,
और भक्ति से चलो तो बड़ा सीधा....!!
विचार से चलो तो बहुत दूर,
और भाव से चलो तो बहुत पास....!!
नज़रों से देखो तो कण कण में
और अंतर्मन से देखो तो जन जन में....!!!

- - - - - - - -

कुछ लोग हृदय पर ऐसा असर
कर जाते हैं, टूटे हुए दर्पण में भी
पूरे नज़र आते हैं।
ऊँ
मिलते हैं हमें कुछ क्षण के लिए
पर जीवन भर के लिए दिल में
बस जाते हैं।।

- - - - - - - -

सबकुछ छोड़ देना
पर मुस्कुराना और
उम्मीद कभी न
छोड़ना।

- - - - - - - -

'अवसर'
और
'सूर्योदय'
में एक ही समानता है
देर करनेवाले
इन्हें हमेशा खो देते हैं।

कृष्णा सोबती :अन्दाज़े बयाँ और

♦ डॉ. शशि मुदीराज

'हम हशमत' (1977) की शुरुआत में कृष्णा साबती ने रचना-प्रक्रिया को लेकर लिखा है - "इन्सान की ज़िन्दगी के इने-गिने एकांत क्षणों की तरह ही कलाकार के भी कुछ सार्थक क्षण होते हैं। वे कहीं से तोड़कर नहीं लाये जा सकते, न ही चाहने से पाये जा सकते हैं। उनके लिए तो बरसों इंतज़ार करना होता है, हालाँकि वे हर दिन आपके दिल के आसपास जिया करते हैं। कभी-कभार आपकी बेखबरी में ही आपके दिल का दरवाज़ा खटखटाते हैं और आपके लिखने की सूरत में आपसे जवाब पाते हैं।"

यही कारण है कि कृष्णा सोबती के लेखन में ये रचनाक्षण अलग-अलग वक्तों में अलग-अलग ढंग से अलग-अलग बुनावटों में ढलकर ज़िन्दगी और सृजन के अंश बनते जाते हैं। कृष्णा सोबती ने बहुत अधिक नहीं लिखा (अपने पूर्व और समकालीनों की तुलना में) लेकिन जो कुछ भी लिखा वह अपनी जगह प्रतिमान बन गया। कहा जाता है न, कि ज़िन्दगी बड़ी होनी चाहिए, लंबी नहीं, उसी तरह लेखन के बारे में भी कहा जा सकता है कि विविध होना चाहिए, विपुल नहीं, और यह भी कि सार्थक होना चाहिए, पृथुल नहीं। कृष्णा सोबती महसूस करती हैं कि जितनी लम्बी उनकी जीवनावधि (जन्म 1925) है और जितना गहरा और बहुआयामी उनका जीवनानुभव है उसकी तुलना में उन्होंने कम लिखा "क्योंकि एक ज़ालिम-सी तटस्थता दिलदिमाग पर कब्जा किये रहती है।" चाहा बहुत, पर इससे छुटकारा न मिल सका। यही वजह है कि एक बहुत बड़ा वक्त खाद बनकर रह गया। लेकिन इसके लिए उनको अफसोस नहीं है और अफसोस हमें भी नहीं होना चाहिए, क्योंकि जो लिखा वह वक्त के माथे पर लकीर बनकर हर गया। 'सिक्का बदल गया' कहानी से सन् 1948 में कृष्णा सोबती ने अपनी पहचान पुख़्ता, की यह साबित करते हुए कि विभाजन की यातना को अपने तन-मन पर झेलनेवाले लोगों के दर्द से जो लेखक बेखबर हैं और अनुभूति की प्रामाणिकता या भोगे हुए यथार्थ का नारा बुलन्द करते हैं वे या तो कायर हैं या गैरज़िम्मेदार। उसके बाद, यानी लगभग एक दशक में कृष्णा सोबती ने एकदम अलग विषयों पर कहानियाँ लिखीं, जैसे 'खम्माघणी' (1951) और 'कलगी' (1952)। दोनों में ऐतिहासिक घटनाक्रम है। सिक्खों और अंग्रेज़ों के बीच युद्ध और उसमें सिक्खों का हार जाना ऐसा विषय है जो लगातार उनका पीछा करता है और 'डार से बिछुड़ी' की रचना होती है, यही आगे चलकर विस्तृत फलक पर 'ज़िन्दगीनामा' की शक्ल अख़्तियार करता है। 'मित्रो मरजानी' और 'यारों के यार' अलग रंग के तो हैं ही, 'हम हशमत' में कथ्य और रूप का निराला ही तेवर नज़र आता है। और फिर 'बादलों के घेरे' और 'सूरजमुखी अंधेरे के' गहन रूमानियत

में डूबी कहानियाँ भी कृष्णा सोबती की ही हैं। हिन्दी में विविध और विपुल लिखनेवालों की कमी नहीं है लेकिन वह एक बात जो कृष्णा सोबती के लिए 'अन्दाज़े बयाँ और' का विशेषण याद दिलाती है। वह यह कि अपने हर कथ्य के लिए एक अलग रूप और अपनी हर रचना के लिए भाषा का एक नया चोला वे चुनती हैं। उनके इस विस्तृत वैशिष्ट्य को चर्चित और रेखांकित करने के लिए कुछ उपशीर्षकों का उपयोग उचित होगा-

(1) कथाशिल्प :- कृष्णा सोबती की किस्सागोई अलग ही ढंग की है। यह प्रेमचंद की तरह या जैनेंद्र की तरह या नई कहानी के झण्डाबरदारों की शैली से एकदम अलग है जिसमें कविता की संवेदना है और पाठक को साझेदार बनाते चलने की नीयत है। कृष्णा सोबती का नैरेशन किसी वाचक या नैरेटर की तरह एकालाप में नहीं चलता और न ही पाठकों को तमाशबीनों की तरह रिझाने की कवायद करता है बल्कि हर शब्द, हर पंक्ति में पाठक को अपने साथ लेते चलने की साफ नीयत से काम करता है। लेकिन कथाशिल्प के अन्तर्गत भी अलग-अलग तरह की शैलियाँ हैं, क्योंकि अलग-अलग कहानियाँ (छोटी और लम्बी) और उपन्यास हैं। कथालोचन के जो प्रचलित मानक हैं, जैसे - विषयवस्तु, चरित्र, संवाद, परिवेश, भाषा वगैरह अब पुराने और अति प्रचलित हो चले हैं और कृष्णा सोबती के लिए तो और भी नाकाफ़ी हैं। फिर भी मुख्य बिन्दु या फोकस की दृष्टि से जाँचा जाए तो कृष्णा सोबती के कथाशिल्प की विविधता स्वतः प्रमाणित हो जाएगी, जैसे- शुरू की कहानियाँ 'गुलाबजल गँडेरियाँ' (1952), 'भोले बादशाह'(1953), 'टीलो ही टीलो'(1954) और 'दादी अम्मा'(1954)। इन कहानियों में स्थितियाँ और चरित्र एक दूसरे से टिके हुए, एक दूसरे के आसरे हैं। खास तौर से 'दादी अम्मा' में संयुक्त परिवार का जो भरापूरा तंत्र है, खुशहाली है, छोटे-छोटे गिले शिकवे हैं वे ही रूप बदलकर और फोकल प्वाइंट (मुख्य बिंदु) बदलकर 'मित्रो मरजानी' में आ जाते हैं जहाँ गुरुदास और धनवन्ती अपने बेटों-बहुओं से भरे-पूरे परिवार का सुख-दुख भोग रहे हैं। लेकिन इन सबको परे करते उठ ख़डा होता है इस कहानी का केन्द्रीय चरित्र है सुमित्रावंती यानी मित्रो। देह की अधबुझी प्यास से तड़पती, बोल-कुबोल बोलती मुँहजोर मित्रो का चरित्र, उसके मायके की पृष्ठभूमि और माँ का चरित्र, परिवार और दाम्पत्य की धज्जियाँ उड़ाने की कूवत रखता है। लेकिन अंत क्या होता है? कृष्णा सोबती बड़े सलीके से संयुक्त परिवार के प्रति अपने रुझान और मोह को बचाते हुए मित्रो को एकनिष्ठ दाम्पत्य में बाँध देती हैं। कहानी के अंत में मित्रो और उसकी माँ के चरित्रों का वैषम्य विवाह नामक संस्था के पक्ष में निर्णय लेने के लिए पाठक को विवश कर देता है। अतृप्ति से उपजी सारी बोल्डनेस और कटुता के बावजूद जब ज़िन्दगी में स्थायित्व और भटकाव के बीच चुनने का समय आता है तो मित्रो स्थायित्व को चुनती है, एकनिष्ठता को चुनती है, बन्धन और मर्यादा को चुनती है। यहाँ बिना आदर्शवाद का ठप्पा लगाये कृष्णा सोबती ऐसे अपरिहार्य मोड़ पर पाठक को ला खड़ा करती हैं कि मित्रो के नाम पर पाठक स्वतः भागीदारी की मुहर लगा देता है।

संयुक्त परिवार का टूटना मुक्तिोध को बीसवीं शताब्दी की सबसे बड़ी दुर्घटना लगा था (आश्चर्य नहीं कि मुक्तिबोध कृष्णा सोबती के भी प्रिय कवि रहे हैं) और कृष्णा सोबती की भी चिन्ता यही है कि संयुक्त

परिवार, जो हमारे सामाजिक ढाँचे की रीढ़ रही है, टूटने की चपेट में है और इनके साथ ही चमक खो चुकी है भारतीय संबंधों की सघनता और घनत्व। लेकिन इसकी प्रतिक्रिया यह हुई कि संयुक्त परिवार का दबाव हटने से व्यक्ति की स्वतंत्र निर्णय लेने की क्षमता लौटी और इससे क्या नतीज़ा निकला कि जहाँ समाज के प्रभुत्व में व्यक्ति की साख समाज का अंग होने में थी, वहाँ आज मानव की चेतना निज की एकांतिकता को सँजोने में है। इसी के साथ जुड़ी है वह मौन अभिव्यक्ति भी, जिसे सामाजिक संदर्भ में हम व्यक्ति की प्रतिष्ठा का नाम देते हैं।

'दिलो दानिश' ऐसी ही रचना है जिसमें व्यक्ति का विद्रोह अंततः फूट ही पड़ता है महकबानो के माध्यम, और कृपानारायण का खानदान और मर्द की हुकूमत की सारी सोच तार-तार हो जाती है और 'ज़िन्दगीनामा'उसका तो रूप, भाषिक साँचा और रचना के तेवर अलग हैं क्योंकि उसके पात्र लेखिका के इर्द-गिर्द जुटे जीते-जागते लोग थे जिन्होंने उनकी कलम पकड़कर अपनी कहानी लिखवा ली -'ज़िन्दगीनामा के वक्त मेरे पास जो भीड़ आ जुटी थी, वह सचमुच के जीते-जागते लोगों की थी। ऐसी जो सिर्फ उपन्यास लिखने के लिए ही नहीं जुटा ली जाती। वे तो हाड़-माँस के लोग थे जो जीवट के बल पर आपके सामने डटे रहते हैं और अपने मोटे गाढ़े अंदाज़ में असाधारण लोगों से बाज़ी मार ले जाते हैं।स्पष्ट है कि ऐसा कथ्य जिस रूप में व्यक्त होता है वह उपन्यास की प्रचलित कसौटियों को तोड़ेगा ही। क्या है'ज़िन्दगीनामा' आत्मकथा, संस्मरण, उपन्यास, रेखाचित्रों का चलता-फिरता अलबम? या इन सबकी मिली-जुली तस्वीर? कृष्णा सोबती के कथाशिल्प को अलग बनाने में कथा की संरचना भी कम महत्वपूर्ण नहीं है। कुछ कहानियाँ हैं जिनमें स्थितियाँ महत्वपूर्ण हैं, घटनाक्रम है, गति है जैसे 'तिन पहाड़' यहाँ स्थितियाँ हैं, मनस्थितियाँ हैं, एक 'क्लाइमेक्स' है जहाँ तपन और जया की अकस्मात भेंट चायबागान के मालिक रौस से होती है जिसकी बेटी एडिना के कारण जया का बसा-बसाया घर टूट गया। उसके बाद मनस्थितियों के चित्रण में लेखिका डूब जाती हैं। जया का अन्तसंवाद, उसका 'डिप्रेशन', उसका 'हेल्यूसिनेशन' (भ्रम) और फिर जल-समाधि - एकदम अप्रत्याशित अंत। एकदम निराली कथासंरचना कि पाठक अनुमान नहीं लगा सकता कि क्या होनेवाला है। दूसरी ओर 'सूरजमुखी अँधेरे के' का शिल्प -एक अवसाद से दूसरे अवसाद तक की यात्रा, एक निराशा से दूसरी निराशा में डूबते-उतराते हुए रत्ती अन्ततः अपने भीतरी जकड़न से मुक्ति पा लेती है और बाहें खोलकर उस आकाश को अपने में भर लेती है जहाँ, लेखिका के अनुसार

"घरौंदे नहीं बनते
धरती के फूल नहीं खिलते
नहीं उगते तो बस नहीं उगते"-

यानी ज़िन्दगी से कोई अपेक्षा नहीं, सम्बन्धों में कोई शर्त नहीं, बस एक सहज स्वीकार ....। दूसरी ओर 'यारों के यार' का बोलता-गलियाता-संवेदनहीन माहौल जिसमें भवानी बाबू के बच्चे के निधन से भी कोई फर्क नहीं पड़ता।

संवाद :- कथा-संरचना में संवादों की बड़ी भूमिका होती है। कृष्णा सोबती की 'ऐ लड़की' संवादों के बल पर ही चलती है। यह संवाद भी लगभग एकपक्षीय है। माँ जैसे आत्मालाप कर रही है और लड़की सुनती है, बीच-बीच

में कुछ बोलकर इस एकालाप को भंग करती है। शुरू की कहानियों में, जैसे -'भोले बादशाह', 'टीलो ही टीलो' में संवादों और 'नैरेशन' का अद्‌भुत सामंजस्य है जिसका चरम रूप 'ज़िन्दगीनामा' में मिलता है। कथा का शिल्प कृष्णा सोबती पर इतना हावी है कि उनकी कविताओं में भी यही कथात्मकता हावी है। 'हम हशमत' में चित्रण ज़्यादा मुखर है क्योंकि चरित्रों को गहराई से उभारना है। संवाद यहाँ भी अपनी छटा दिखाते हैं। इसी तरह 'दिल्लीः नई-पुरानी' में वर्णन मुख्य है क्योंकि यहाँ स्थल और उसका कल और आज तुलनात्मक ढंग से आया है। कृष्णा सोबती की काव्यात्मक संवेदना को पूरा स्पेस मिला है 'सूरजमुखी अंधेरे के' और 'बादलों के घेरे' में। ये पूरी तरह से स्थितियों और मनस्थितियों का अनूठा सामंजस्य प्रस्तुत करनेवाली कथाएँ हैं। संवाद बहुत कम जो हैं वे सटीक, पात्रों के अन्तस्तल को उभारनेवाले। स्थितियों का वर्णन तब सजीव हो उठता है जब कृष्णा सोबती प्रकृति के साथ मानवीय अनुभवों को एकमेक करती हैं।

(2) **भाषाई तेवर** : कृष्णा सोबती के वैशिष्ट्य का महत्वपूर्ण आधार है - उनकी भाषा-हर रचना की विषय वस्तु, पात्र, परिवेश और संरचना के साथ रंग बदलती हुई। हिन्दी, उर्दू, पंजाबी और विशिष्ट देशज संस्कार लिये उनकी भाषा अलग से मूल्यांकन की अपेक्षा रखती है। 'बादलों के घेरे' और 'सूरजमुखी अंधेरे के' की भाषा में ख़डी बोली हिन्दी का संवेदनशील प्रवाह है, लेकिन इसके विपरीत 'मित्रो मरजानी' में ग्रामीण अंचल की काटती-चुभती भाषा का स्वाद मिलता है, खासकर मित्रो के संवादों में। 'यारों के यार' दफ्तरी माहौल की भाषा है जिसमें गालियों, अपशब्दों की भरमार है, जो हिन्दी जगत में एक आश्चर्यजनक अनुभव बनकर उतरी। 'हम हशमत' हिन्दी-उर्दू मिश्रित निहायत कचोटनेवाली और तिलमिलानेवाली भाषा पेश करती है। 'दिल्लीः नई-पुरानी' के वर्णन में हिन्दी-उर्दू के साथ पंजाबी का पुट है। कृष्णा सोबती जब 'मुक्तिबोध को पढ़ने का एक पाठकीय रुझान यह भी लिखती हैं' या भारतीय संस्कृति पर विचार करती हैं तो उनकी भाषा खडीबोली हिन्दी के तत्सम बहुल रूप का चुनाव करती है, और 'मैं, मेरा समय और मेरा रचना-संसार' में आत्मानुभूति और लेखकीय ईमानदारी के साथ उनकी भाषा कभी उनके बचपन के चित्रों को उकेरती है तो कभी समकालीन आलोचना के मुद्दों पर चोट करती है। सबसे ज़्यादा चर्चित और कुछ भाषाई अबूझता के चलते विवादास्पद रही 'ज़िन्दगीनामा' की भाषा। इसके पक्ष में कृष्णा सोबती दृढ़ता से इस मान्यता पर टिकी रही कि "देश के किसी भी क्षेत्र विशेष या कालखंड की बोली में घुलमिल गए संस्कृत, पाली, उर्दू, अपभ्रंश, व्रज, अरबी, फारसी के शब्दों के लिए इतनी उपेक्षा क्यों?" आगे वे कथ्य के साथ भाषा को साधे रखने की ज़रूरत पर बल देती हैं कि " 'ज़िन्दगीनामा' की भाषा उसके संवाद की भावाभिव्यक्ति में 'ज़िन्दगीनामा' के वातावरण, धरती और लोक की गंध को, अगोचर और अमूर्त को उसकी समग्रता में सँजोने और पकड़ सकने के लिए उस कालखंड के डिक्शन को साधे रखना ज़रूरी था। .... लोक मुद्रा में विलय हो गए जज़्ब हो चुके शब्द-विन्यास को उखाड़ने का कोई कारण न था। उदाहरणार्थ पदक्खिणा (प्रदक्षिणा), सम्भाखन (संभाषण), जस्स (यश), विक्खोभन (विक्षोभन) .... जैसे असंख्य शब्दों का बहिष्कार करना लेखक के अधिकार में नहीं था।"उनकी स्पष्ट सोच है कि ' 'हिन्दी की खूबी उसके

लोकभाषा होने में है केवल अभिजात की ओढ़ी हुई गरिमा में नहीं।"

(3) **गद्य की लय** : कृष्णा सोबती के कथालेखन और गद्यशिल्प की एक विलक्षणता दिखाई देती है जिसे ठीक-ठीक रेखांकित करना मुश्किल है, इसलिए कि सुदीर्घ गद्यांश और कभी-कभी पूरी कथा संरचना को उदाहृत करना होगा। फिर भी बात इस तरह से शुरूकी जा सकती है कि कृष्णा सोबती की कथा-रचना में एक काव्यात्मक संवेदना मौजूद होती है। लेकिन इस काव्यात्मक संवेदना को स्पष्ट करने के लिए यह भी कहना होगा कि कृष्णा सोबती अपनी कथा-रचना में दो तत्वों का समानुपातिक प्रयोग करती हैं- पहला कथ्य का प्रवाह, और दूसरा उसको अनुशासित करती गद्य की लय। उदाहरण के लिए 'बादलों के घेरे' कहानी से शुरुआत की जा सकती है- भुवाली की इस छोटी-सी कॉटेज में लेटा-लेटा मैं सामने के पहाड़ देखता हूँ। पानी-भरे, सूखे-सूखे बादलों के घेरे देखता हूँ। बिना आँखों के भटक-भटक जाती धुंध के निष्फल प्रयास देखता हूँ। सामने पहाड़ के रूखे हरियाले में रामगढ़ जाती हुई पगडंडी मेरी बाँह पर उभरी लम्बी नस की तरह चमकती है। पहाड़ी हवाएँ मेरी उखड़ी-उखड़ी साँस की तरह कभी तेज़, कभी हौले इस ख़िडकी से टकराती हैं, पलंग पर बिछी चद्दर और ऊपर पड़े कम्बल से लिपटी मेरी देह चूने कीसी कच्ची तह की तरह घुलघुल जाती है और बरसों के तानेबाने से बुनी मेरे प्राणों की धड़कनें हर क्षण बन्द हो जाने के डर में चूक जाती हैं।यूँ तो काव्यात्मक संवेदना जयशंकर प्रसाद, अज्ञेय, निर्मल वर्मा - कइयों के गद्यशिल्प में है । लेकिन कृष्णा सोबती की विलक्षणता इससे इतर और इसके साथ कुछ और तत्वों की व्याख्या में पाई जा सकती है। पहला- यह 'बादलों के घेरे' कहानी का आरम्भिक अनुच्छेद है जिसमें पूरी कथा का त्रासद स्वर संकेतित हो रहा है। दूसरा- कथानायक के अनुभव उसके बाहर स्थित प्रकृति और वसतुजगत के आसरे व्यंजित हो रहे हैं जैसे- 'तन का पतझर' बाँह पर उभरी लम्बी नस की तरह पगडंडी साँसों की तरह चलती पहाड़ी हवाएँ .... और तीसरा- पूरे अनुच्छेद में कथ्य के प्रवाह को समेटती गद्य की लय- जैसे कोई उदास रागिनी। पूरी कहानी ऐसे ही सघन अनुभवक्षणों से बुनी गई है। कहानी में घटनाओं की गति है और उन पर अंकुश लगाती चित्रात्मकता भी। और अंत .... एक नितान्त भावात्मक विरोधाभास पर आकर टिक जाता है- "जिस मीरा को मैंने वर्षों जाना है, वह अब पाससी नहीं लगती, अपनी-सी नहीं लगती। उसे मैंने छू-छूकर छुआ था, चूम-चूमकर चूमा था, पर मन पर जब मोह और प्यार की उलछन आती है, तो मीरा नहीं, मन्नो की आँखें ही सगी दीखती हैं।"ऐसा क्यों होता है - कहानी का यही संवेदनात्मक रहस्य है जिससे पाठक न केवल 'कन्विस' होता है बल्कि गहरे में संवेदित भी हो जाता है।

कृष्णा सोबती भावुकता को सघन करने के लिए कई बार आवृत्ति से काम लेती हैं, जैसे- "एक दिन खिड़की से बाहर देखते-देखते इन्हीं बादलों के घेरे में समा जाऊँगा.... इन्हीं में समा जाऊँगा।"

इसी तरह 'सूरजमुखी अँधेरे के' का यह अंश -

"सिर्फ आकाश -
आकाश में घरौंदे नहीं बनते
आकाश में धरती के फूल नहीं खिलते -
नहीं उगते तो बस नहीं उगते -
उगते ही नहीं !
नहीं!"

सारा प्रसंग एक दृढ़ 'नहीं' पर आकर टिक जाता है और जैसे एक उदासी भरा क्षण काँटे की नोक पर टिकी ओस की बूँद के समान थरथराता रह जाता है।

(4) **पाठकीय सहभागिता की अपरिहार्यता:** कृष्णा सोबती हिन्दी की बहुत महत्वपूर्ण, बहुत चर्चित और विशिष्ट लेखिका हैं। लेकिन उन्हें उन अर्थों में 'लोकप्रिय' नहीं कहा जा सकता जिन अर्थों में और जिन शर्तों पर प्रेमचंद हैं या वृन्दावनलाल वर्मा, चतुरसेन शास्त्री या आगे बढ़ा जाए तो राजेन्द्र यादव, मोहन राकेश या कमलेश्वर, अगर लेखिकाओं का संदर्भ लिया जाए तो मन्नू भण्डारी या ममता कालिया सम्प्रेषणीयता की आसान राहों के लिए मशहूर हैं, मगर कृष्णा सोबती को समझने, पसन्द करने और रचनात्मकता में उनके साथ चलने के लिए कुछ अलग ही अपेक्षाएँ हैं। अर्थात् कृष्णा सोबती जितनी अर्थबहुलता और बहुआयामी अनुभूति के साथ अपने को अभिव्यक्त करती हैं, पाठक को भी उसी शिद्दत से अनुभूति के उसी धरातल पर उतरना पड़ता है। यही कारण है कि 'मित्रो मरजानी' या 'यारों के यार' अपनी तथाकथित 'बोल्डनेस' के कारण चर्चित हुईं, मगर उसकी संवेदना को महसूस नहीं किया गया। इसी तरह 'ज़िन्दगीनामा' भाषा की अबूझता का आरोप झेलती रही, मगर लेखिका की अपनी ज़िन्दगी की परतें इस उपन्यास में कितनी उधेड़ी गई हैं -इसे समझना किसी ने नहीं चाहा। कृष्णा सोबती का गद्य-शिल्प ही कुछ ऐसा है कि कई बार पाठकों के लिए प्रसंग अबूझ रह जाते हैं, खास तौर पर 'हम हशमत' के कई लेख, जैसे - 'इक ज़िन्दा ज़ालिम चंगा ए' जो नागार्जुन पर केन्द्रित है या श्रीकान्त वर्मा पर। 'ऐ लड़की' भी अलग तरह से पाठकीय समझदारी की अपेक्षा रखती है। 'दिल्ली : नई पुरानी' अलग तरह का संस्मरण है। लेकिन हिन्दी आलोचकों और पाठकों के लिए कृष्णा सोबती ने एक मूल्यवान स्पष्टीकरण, जिसमें संस्मरण, वक्तव्य और साफ़गोई का मिलाजुला स्वाद है, दिया है -'मैं, मेरा समय और मेरा रचना-संसार' लेख के रूप में। इसके माध्यम से कृष्णा सोबती अपने लेखन को समझने-महसूस करने की राह बताती हैं इस दृढ़ विश्वास के साथ कि "दोस्तो, यूँ तो चिराग कवियों और शायरों की आँखों में झिलमिलाते हैं .... मगर चिराग तो हर दिल का भी एक-एक हुआ ही करता है .... हर किसी को अपना ही पैग़ाम उसे देना होता है।"

◆ सेवानिवृत्त प्रोफेसर
हिन्दी विभाग
यूनिवर्सिटी ऑफ हैदराबाद
हैदराबाद-500046
फोन- 9391092053

समय और सयानेपन की दास्तान

♦ बिन्दु वेलसर

कृष्णा सोबती केलिए समय संगीत जैसा है। संगीत के उपकरण से निकलती सूक्ष्म ध्वनियों को यदि कोई न पहचान सके, फिर भी सम्मोहित भाव से उस आलाप को सुने उसी तरह दूसरे की सुर भाषा को यदि न समझ सके फिर भी उसे अपने भीतर समझाने की कोशिश करे। वही जीवन है । इस जीवन में हम नहीं जानते कि हम किसको सुन लेते हैं और किसको बिना सुने ही अपने से भुला देते हैं। अनाम कर देते हैं।

"समय सरगम।
समय एक राग । .....
उदात्त, अनुदात्त और त्वरित।"

इस जीवन की अनेकों स्वर संज्ञाएँ, स्वरावलियाँ और श्रुतियाँ हैं। और हर एक के आलाप में से बहते हैं भक्ति-भाव, राग-विराग, प्रेम-अनुराग, पीड़ा-दर्द, स्मृति-विस्मृति, तृप्ति- तन्मयता, उल्लास, दुःख-सुख, शोक-विषाद, आनंद-आह्लाद आदि।

"संचित जीवन का यही राग।
आदिम षडज और निषाद।
पहला स्वर आदिम । जन्म स्वर ।
षडज, तरुणाई स्वर।
निषाद, इस मानवीय आख्यान का अंतिम स्वर।" [1]

समय के बारे में, हमारे जीवन में समय की अहम् भूमिका के बारे में पल-पल अनंत में विलीन हो रहे हमारे जीवन में समय के महत्त्व के बारे में और सयाने लोगों के मन की उलझनें, तनहाइयाँ, स्वास्थ्य के प्रति उनकी चिंता आदि विषयों पर हमारा ध्यान आकर्षित करने का प्रयास 'समय सरगम' उपन्यास में किया गया है। समय और सयानेपन इस उपन्यास के दो मुख्य पात्र हैं। उपन्यास में आदि से अंत तक इनकी उपस्थिति हम महसूस कर सकते हैं।

जीवन असीम नहीं इसकी एक सीमा होती है । हम अनंत काल तक इस दुनिया में जी नहीं सकते। हमें एक न एक दिन अनंत में विलीन हो जाना पड़ेगा। उसके बाद हमारा क्या अस्तित्व रह जाएगा, कोई नहीं जानता। कदाचित् यह दुनिया अनंत काल तक ऐसे ही बनी रहे लेकिन हमारेलिए इसका अस्तित्व हमारा मृत्युपर्यंत ही है। "जब तक हम हैं समय है। धरती है आकाश है हवा है पानी है सब है तब तक हम इनका आनंद ले सकते हैं। हम हैं तो समय है। हमारी ही चेतना में संचित है काल-आयाम। हम हैं, क्योंकि धरती है, हवा है, धूप है, जल है और आकाश है। इसलिए हम जीवित हैं। भीतर और बाहर सब - कहीं- सब कुछ को अपने में संजोए। विलीन हो जाने को पल-पल अनंत में।..." [2] हम यह भी नहीं कह सकते कि कब अनंत में विलीन हो जाएँगे। हमारा बचपन हँसी-खेलों में बीत जाता है। यौवन तो स्वयं विशिष्ट होने व दिखाने का दबाव,

सफल होने की सामाजिक ज़रूरत और प्रतिस्पर्धा, हमेशा अव्वल होने की लगातार और लक्ष्यहीन दौड़, असफलता की दुश्चिंता आदि से छूट जाता है। बुढ़ापा तो स्वास्थ्य चिंता, मृत्यु भय, अकेलापन आदि से गज़र जाता है। इसी बीच मानव कब जिए? और कैसे जिए? अपनी ज़िन्दगी को खुलकर और वर्तमान में जीने की, ज़िन्दगी का आनंद लेने की, भविष्य की चिंता से परेशान न होने की समझ बहुत कम लोगों को ही होती है। छोटी-छोटी चीज़ें जीवन को कितना सुख देती हैं, उतना सुख हमें जीवन की बड़ी चीज़ें भी नहीं दे पातीं। इस उपन्यास का मुख्य पात्र आरण्या एक ऐसी ज़िन्दगी जीना चाहती है। वह कहती है ,"अंतिम पड़ाववाली भूमिका कभी भी पास आ ख़डी हो सकती है। उसे होना है। सबकी होनी है । .....जब तक हो आराम करो। मौसमों का सुख लो। ऐसी हवाएं कहीं और नहीं। चाँद पर भी नहीं।" [3]

कृष्णा सोबती के अनुसार इस धरती पर हम बार-बार जन्म नहीं लेते। लगता है कि वे पुनर्जन्म पर विश्वास नहीं करतीं। उनके लिए पुनर्जन्म तो इस धरती में ही जीवन के प्रति दृष्टिकोण बदलने के साथ-साथ और अपने आप को सुधारने-संवारने के साथ-साथ होता है । "इस जीवन की परम अद्वितीयता है। एक संपूर्ण संरचना अपने प्रति चैतन्य होना ही पुनर्रचना है।.....

जितनी बार अपने को संवारना, नया करना, उतनी बार पुनर्जन्म।.....

चुपके से आरण्या ने अपने से पूछा- भला कितने जन्म हो चुके तुम्हारे अब तक।.....

सचमुच अनेक जन्म की तैयारी रही है इस एक जन्म में ।" [4]

लेकिन इस धरती पर या हमारे पुराने घर में दबारा आने केलिए बार-बार जन्म लने की क्या ज़रूरत? शायद मरने के बाद भी किसी की यादों के ज़रीये हम अपने इस पुराने घर में आ पाएंगे। जब अपने मरे हुए बेटे के बारे में ईशान कहता है तब आरण्या सोचती है - "क्या तभी कोई आता है जब सशरीर आता है । कभी-कभी खयालों में भी अपने पुराने घर में आगमन हो जाता है ।"[5] यही इच्छा सभी के मन में बनी रहती है यही सोच शायद मानव को समाज में रहने, घर बसाने और सामजिक संबंध बनाकर रखने की प्रेरणा देती है। किसी की यादों के ज़रिये ही सही दुबारा इस पुराने घर में आना सभी चाहते हैं ।

समय सब कहीं है, हमारे अंतर भी और हमारे आगे भी। लेकिन समय सभी की पकड़ में नहीं आता या समय को पकड़ने या समय को अपने में समाने की कोशिश सभी नहीं करते। सभी अपनी एक दौड़ में है। इस दौड़ में अपने हाथ से खिसक रहे प्रत्येक पल को पकड़ने में ज़्यादातर लोग असमर्थ हो जाते हैं। फिर भी हर बीते हुए लमहे याद बनकर या अनुभव बनकर हमारे साथ होंगे। इसलिए प्रत्येक लमहे को अपनी हथेलियों से पकड़ने की कोशिश आरण्या करती है । बालकनी में खड़े होकर बौछार और हवा की लहराती जुगलबंदी को निहारती हुई आरण्या सोचती है, "धरती की ओर झुकते और आकाश की ओर खुलते पत्ते अपनी ही छटा पर मोहित। बौछार का यह दृश्य-श्रव्य जाने कितना प्राचीन और नित-नित नया। सब अपनी लय में समय को तिरोहित करता है। हम हैं तो समय है ।

समय तो हमारे बाहर भी है और आगे भी। वही है जो हमें आतंकित करता है। .....

आगे बढ़कर क्षण को पकड़ लो जो तुम्हारा है। यह शाम, यह क्षण, यह बारिश लपककर हथेली में समेट लो। एक बार चूकी तो हमेशा केलिए खिसक जायेगी।"[6] इस प्रकार समय को महसूस करने की,समय को पकड़ने की, समय को अपना बनाने की, प्रत्येक पल को जीने की एक प्रेरणा देती हैं इस उपन्यास के द्वारा कृष्णा सोबती जी।

यह सिर्फ समय की नहीं बुढ़ापे की भी कहानी है। इस उपन्यास के सभी पात्र सयाने हैं। कृष्णाजी ने बूढ़े लोगों केलिए सयाने शब्द का प्रयोग किया है। "दोनों सयाने एक-दुसरे को युवाओं की तरह देखने लगे।"[7] अच्छे घरों और अच्छे पदों पर रहनेवाले लोगों केलिए बुढ़ापा एक आफत बनकर आ रहा है। इस उपन्यास की पात्र दमयंती, कामनी और प्रभुदयाल इसके मिसाल हैं। उन्हें लूटने केलिए अपनी संतान और भाई बहन तक तैयार खड़े हैं। यदि वे लूटने न देंगे तो उन्हें मारने को भी नहीं हिचकते। कामनी, दमयंती और प्रभुदयाल तीनों ऐसी परिस्थितियों से घिरे हैं। इनको मदद की ज़रूरत है। लेकिन इनकी मदद कौन करेगा? कामिनी की दयनीय स्थिति को देखकर आरण्या सोचती है। उसे मदद की जरूरत है पर क्या सचमुच कोई एक दूसरे केलिए कुछ कर सकता है! ओल्ड-ऐज होम वही एक इलाज। देखरेख करनेवाले कहाँ है! कहाँ है पुराना परिवार! छोटी-बाड़ी तल्खियों से तो वही अच्छे थे! वही।"[8]

इस उपन्यास के सभी पात्र जीवन के अंतिम पड़ाव में खड़े है। इसलिए मृत्यु भय से ग्रस्त हैं। उनके हर व्यवहार के पीछे यह मृत्यु भय है । लेकिन इस उपन्यास में आरण्या ही एक ऐसी पात्र है, जो मृत्यु भय से मुक्त होकर जीवन के प्रति गहरी आस्था रखती है। वह अविवाहित है। उनका अपना कोई परिवार नहीं। वह एकाकी जीवन जी रही है। अपने जीवन को अकेले जीने का उसका निर्णय अपने जीवन की किसी परिस्थिति से मजबूर होकर नहीं है। अपने इच्छानुसार खुद लिया है और इस निर्णय से उसे कोई पछतावा भी नहीं है। सबसे अहम बात यह है कि उसके जीवन में अकेलापन की व्यथा नहीं है। उसके जीवन का मन्त्र है जीवन को भरपूर जीना और जीवन के दुःख-दर्द से दूर रहना। "अकेलापन उसकी इस ढलती उम्र में एक समस्या नहीं बल्कि उनकी एक स्वतंत्रता है। अकेले रहते-रहते जान लेगी कि यह स्थिति भी कम अच्छी नहीं। अकेले होने पर आप अपने से दूर नहीं होते । अपने में खोजते है उन संभावनाओं को जो मूल्यवान है। आप अपने नज़दीक होते जाते है।"[9]

उपन्यास हमें याद दिलाता है कि बुढ़ापा जीवन का अंत नहीं है। सयाने के भी कई इच्छाएं होती हैं। "जीवितों की कई पवित्र इच्छाएं होती हैं जो इसके बाद भी बनी रहती है।"[10] बुढ़ापे की तकलीफों को, कमज़ोरियों को मुसीबतों को याद करके रोते रहना बेवकूफी है। समय के साथ-साथ उम्र बढ़ जायेगी। शरीर दुर्बल हो जायेगा। जाने-अनजाने एक दिन नित्यता में विलीन हो जायेगा। यानि वक्त गुज़रने का पता ही नहीं चलेगा। इसलिए गुज़रते समय को अनदेखा कर दो । "निशब्द है समय, पर इसमें भी बहुत कुछ धड़क रहा है और उम्र? वह बकरी बनी चर रही है, धीरे-धीरे चरने दो उस ओर मत देखो ।"[11] यह दुनिया ही ऐसी है कि जो भी

है वह बदलेगा। जैसे Hercules ने कहा "The only thing that is constant is change"। लेकिन बदलाव इतने धीरे से आता है कि पता ही नहीं चलेगा कि वक्त ने कैसे और कब हमें बदलकर बुढ़ापे की इस मोड़ पर लाकर ख़डा कर दिया। आज की इस उत्तराधुनिकता के युग में, उपभोक्तावाद के युग में, तकनीकी और सूचना प्रौद्योगिकी के युग में, मानव जीवन की इतनी प्रगति हो गई है। लेकिन मानव अपने संबंधों को बनाकर रखने में जितना सफल हुआ, वह सोचने का विषय है । कृष्णा सोबती की ही कहानी 'दादी अम्मा' में दादी किस प्रकार अपने ही घर में अकेली और पराये हो जाती है उसी प्रकार उत्तराधुनिकता प्रत्येक मानव को अपने ही लोगों से दूर अकेला कर देती है। "सुविधाओं के सच बड़े होते जायेंगे और संबंधों के विश्वास सिकुड़ते जायेंगे।"[12]

बुढ़ापा अपने आप में एक बीमारी नहीं है, लेकिन बुढ़ापे में बीमार पड़ने की आशंकाएं बढ़ जाती है। इसलिए हमेशा सतर्क रहना पड़ता है । इसकी ओर इशारा करनेवाले कई वाक्य इस उपन्यास में यत्रतत्र पाये जाते हैं । जैसे -"संभलकर ! गिरोगी । कम पुरानी नहीं हो । दुर्घटना कभी भी हो सकती है ।"[13]

"पुराने नागरिकों को इस तरह की लापरवाहियाँ बहुत महँगी पड़ सकती हैं।"[14]

"उम्र के इस मोड़ में तो अपने से संतुलन की अपेक्षा होनी चाहिए ।"[15]

' 'उम्र के इस छोर पर पहुंचकर देह संचारिणी सिकुड़ने लगती है, शिथिल पड़ जाती है, इसलिए किसी न किसी तरह की हरकत ज़रूरी है । राज की सैर तो और भी ।"[16] इस प्रकार बुढ़ापे पर अपनी स्वास्थ्य-रक्षा से जुड़ी कई आशंकाएं उपन्यास में दखी जा सकती हैं।

निष्कर्ष में कहा जा सकता है कि इस उपन्यास के दोनों मुख्य पात्र ईशान और आरण्या अपने-अपने दृष्टिकोण से जीनेवाले दो स्वतन्त्र व्यक्तित्व हैं। दोनों दोस्त हैं। दोनों का जन्म एक ही तारीख में हुआ है। लेकिन उनके चरित्र में किसी प्रकार की कोई समानता नहीं है। ईशान का जीवन अनुशासन से बद्ध है। लेकिन आरण्या किसी प्रकार के अनुशासन से बद्ध न होकर खुलकर जीती है । उसका विचार है कि भारतीय नारी को समाज की जर्जर और रूढ़ मान्यताओं के विरुद्ध संघर्ष करते हुए आत्मसम्मान का जीवन व्यतीत करना चाहिए। जिस प्रकार सोबती जी अपनी नारी पात्रों को सभी प्रकार के सामाजिक बन्धनों से मुक्त स्वतन्त्र जीवन-मार्ग को अपनाने के लिए प्रोत्साहित करती है उसी प्रकार इस उपन्यास की नारी पात्रों को भी स्वतंत्र जीवन जीने की प्रेरणा देती है। आरण्या उम्र से ज़रूर बूढ़ी है, लेकिन मन से जवान है । वह हर समय उत्साही, ताज़ा, नित्य नूतन और आनंदित रहनेवाली महिला है। वह आशावादी है। वह अपनी ज़िन्दगी को स्वतन्त्र रूप से जीना चाहती है । अकेलापन ने उसमें आत्मविश्वास जगाया। इसी आत्मविश्वास ने उसको बेफिक्र और मस्तमौला बनाया। अकेलापन को कैसे मनाया जा सकता है यह वह अच्छी तरह जानती है ।

संदर्भ

1.समय सरगम, कृष्णा सोबती पृ. सं 152-153

2. वही पृ. सं 90

3. वही पृ. सं 89

4. वही पृ. सं 13
5. वही पृ. सं 24
6. वही पृ. सं 17
7. वही पृ. सं 37
8. वही पृ. सं 101
9. वही पृ. सं 82
10. वही पृ. सं 15
11. वही पृ. सं 15
12. वही पृ. सं 92
13. वही पृ. सं 11
14. वही पृ. सं 12
15. वही पृ. सं 33
16. वही पृ. सं 91

◆ असिस्टेंट प्रोफेसर
हिन्दी विभाग
सरकारी वनिता कॉलेज
तिरुवनन्तपुरम
फोन - 9495746923।

सही उत्तर चुनें

1.कृष्णा सोबती का जन्म किस साल में था?
(अ) 1923
(आ) 1924
(इ) 1925
(ई) 1926

2.'डार से बिछुड़ी' पहले किसमें प्रकाशित हुई?
(अ) निकष
(आ) जागरण
(इ) कल्पना
(ई) अक्षरा

3.'गुजरात पाकिस्तान से गुजरात हिन्दुस्तान' किस विधा की रचना है?
(अ) यात्रावृत्त
(आ) संस्मरण
(इ) जीवनी
(ई) उपन्यास

4.कृष्णा सोबती का आत्मकथात्मक उपन्यास कौन-सा है?
(अ) हम हशमत
(आ)गुजरात पाकिस्तान से गुजरात हिन्दुस्तान
(इ) ज़िन्दगीनामा
(ई) यारों के यार

5.कृष्णा सोबती का लिखा यात्रावृत्त कौन-सा है?
(अ) मार्फत दिल्ली
(आ) तिन पहाड़
(इ) लेखक का जनतंत्र
(ई) बुद्ध का कमण्डल लद्दाख

6.'हम हशमत' के कितने भाग प्रकाशित हुए?
(अ) 1
(आ) 2
(इ) 3
(ई) 4

(शेष पृ.सं. 19)

कृष्णा सोबती और 'ज़िंदगीनामा'

♦ डॉ.एस.लीला कुमारी अम्मा

साठोत्तर हिंदी लेखिकाओं के बीच कृष्णा सोबती का नाम एक जागरूक लेखिका के रूप में विख्यात है। पुष्पपाल सिंह की राय है कि "नारी की अस्मिता केलिए आधुनिक सामाजिक परिवेश में जो लेखिकाएँ अपनी कलम से संघर्ष कर रही हैं, उनमें कृष्णा सोबती का नाम अग्रणी है।"[1] रचनाकार के व्यक्तित्व का अध्ययन उनकी रचनाओं के अध्ययन केलिए सहायक सिद्ध होता है।

कृष्णाजी का जन्म 28 जनवरी 1925 में गुजरात में हुआ। स्वतंत्र देश की लेखिका और नागरिक होने के नाते साधारण व्यक्ति की हैसियत से वह जी रही थीं। 'समय सरगम' में कृष्णा साबती ने अपने तत्कालीन पारिवारिक जीवन का प्रतिबिंब पात्रों के माध्यम से अभिव्यक्त किया। इससे स्पष्ट है कि उनका बचपन अपने माता-पिता और भाई-बहन के बीच बीता। किताबें पढ़ने के प्रति इस परिवार में विशेष रुचि परिलक्षित होती है। वेशभूषा में उनको सादगी पसंद है। कृष्णाजी की शिक्षा दिल्ली, शिमला और लाहौर आदि अनेक स्थानों पर हुई। पंजाबी ढंग का खाना पसंद करती थीं। प्रकृति के खुले माहौल में घूमना बहुत अच्छा लगता था। भाषा पर गहरा प्रभुत्व था। जीवन के यथार्थ को गहराई से पहचानकर उसे संवेदना के स्तर पर जीकर कलात्मक रूप प्रदान करने में सफल कृष्णा सोबती ने हिंदी साहित्य जगत में अपनी अलग पहचान बनाई। उनका रचना-संसार व्यापक है। बहुआयामी है। उन्होंने अपने उपन्यासों में समाज के जीवंत प्रश्न तथा अंधविश्वास का खंडन करते हुए अपने प्रगतिशील विचारों का प्रसार एवं प्रचार अपने लेखन के माध्यम से किया। कृष्णा साबती सपनों के संसार से नहीं, बल्कि जीवन के यथार्थ को कहानी से जोड़ती है।[2] कथा-सृजन से उन्हें न केवल ख्याति मिली बल्कि सृजन-संतुष्टि का सुख भी मिला।

कृष्णा सोबती लेखन की गुणवत्ता में विश्वास करती है। साहित्यिक रचना को वे गौरवपूर्ण काम मानती थीं। उनकी हर रचना दीर्घ साधना का परिणाम है। कई नारी पात्रों के माध्यम से नारी स्वतंत्रता के समर्थक के रूप में अपना परिचय दिया है। आज के युवा लेखकों को वे आत्मविश्वास से लिखने की प्रेरणा देती थीं। वह स्वयं सत्यनिष्ठ थीं। कृष्णाजी को अनेक पुरस्कार प्राप्त हुए हैं। हिंदी अकादमी ने 2000-2001 केलिए अपने सर्वोच्य पुरस्कार 'शलाका सम्मान' से उन्हें सम्मानित किया। इस पुरस्कार को उन्होंने अस्वीकार किया था। उनके ही शब्दों में अस्वीकार करने की मुख्य वजह -'एक ऐसे दृष्टिकोण का विरोध था जिससे लेखक की गरिमा आहत होती थी।' सन् 2006 का 'व्यास सम्मान' भी प्राप्त हुआ। अनेक पुरस्कारों से सम्मानित कृष्णा सोबती हिंदी साहित्य का चमकता हुआ सितारा था। सन् 2018 में कृष्णाजी का भौतिक

शरीर काल-यवनिका के पीछे छिप गया, लेकिन उनकी आत्मा सदा हिंदी क्षेत्र में जीती रहेगी।

'ज़िंदगीनामा' सन् 1971 में प्रकाशित उपन्यास है। यह उपन्यास कृष्णा सोबती की अब तक की कृतियों में सर्वश्रेष्ठ चरम उपलब्धि है। इसको 'साहित्य अकादमी पुरस्कार' और 'साहित्य शिरोमणि पुरस्कार' प्राप्त हुए है। उपन्यास के केन्द्र में पंजाब की संस्कृति है।

'ज़िंदगीनामा' पंजाब के अंचल में रहनेवाले लोगों के जीवन का इतिहास है। प्रमुख रूप से इस उपन्यास में विभाजन पूर्व पंजाब के शांत सद्भावपूर्ण जीवन को चित्रित किया गया है। भीष्ण साहिनी के मत में "यह किसी एक अंचल की ही कहानी न होकर इन्सानी रिश्तों के एक विरल सामंजस्य की भी कहानी है, हिंदू मुसलमानों की सांझी संस्कृति की कहानी है, जो पुस्तक के पन्नों पर मुस्कुराती हुई सामने आती है।" [3]

'ज़िंदगीनामा' आंचलिक उपन्यास है। लेखिका का उद्देश्य रहा है कि अंचल में बहते हुए जीवन को चित्रित करना। इसका कथानक खेतों की तरह व्याप्त सीधा-सादा और धरती से जुड़ा हुआ है। उपन्यास के लोगों को लोककथाओं पर विश्वास है। उपन्यास के आरंभ में ही लाला वड्डे ने अपनी कहानी में देवताओं की तीन बातें बतायी हैं। देवता की पांतों में पृथ्वी के देवता, आकाश के देवता और बड़े मंडल के देवता हैं। पुत्रों से सोता हुआ कलियुग, छोड़ता हुआ द्वापर युग और खड़ा हुआ त्रेता तथा चलता हुआ सत्युग है। लाल बड्डे धरती और आकाश में सूरज को ही श्रेष्ठ मानते हैं। पंजाब के रहन-सहन, रीति-रिवाज़ आदि को लेखिका ने सूक्ष्म निरीक्षण शक्ति से जीवन्त कर दिया है। तत्कालीन समाज में व्याप्त अंधविश्वासों को सूक्ष्मता से अंकित किया है। डॉ.यश गुलाटी के शब्दों में "साहित्य केवल प्रमाण मात्र नहीं है, अपितु लोगों की ज़िंदगी का जीवन्त दस्तावेज़ है। कृष्णा साबती के उपन्यास इस परिभाषा को पूर्णतः चरितार्थ करते हैं।"[4] असल में जिस प्रकार प्रेमचंद ने अपने उपन्यासों के द्वारा उत्तरभारत के गाँवों का जीवन्त चित्रण किया है उसी प्रकार कृष्णा सोबती ने 'ज़िंदगीनामा' उपन्यास में पंजाब के एक गाँव के चित्र द्वारा संपूर्ण पंजाब प्रदेश के जीवन को प्रस्तुत किया है। यह मातृभूमि के प्रति लेखिका के प्रेम का परिचायक है।

इन्सानी रिश्तों को 'ज़िंदगीनामा' में चित्रित किया गया है। पंजाब अंचल में स्त्री का माता रूप महत्वपूर्ण है। माँ रूप का महत्व इन पंक्तियों में चित्रित किया गया है-

"सात पुत्र सत्रह पोत्रे
पाँच घिया पन्द्रह पोत्रो
नितनित घोवे माँ किच्छी
टब्बरों के पोतडे ।
अरे खट्टी कमाई खाये कर्मवालडियाँ
नितनित ब्याह रचाये कर्मवालडियाँ।" [5]

'ज़िंदगीनामा' में विविध त्योहार, पर्व, धार्मिक उत्सव आदि का भी चित्रण हुआ है। ग्रामीण जनता के मनोरंजन केलिए लोकनृत्य, लोकनाट्य, पर्व-उत्सव आदि समाविष्ट हैं। डेरा जट्टा गाँव की ज़िंदगी का हर पहलू जिंदा रूप में मौजूद है। इस गाँव में हीरा-साँसी भी है, जो चोरी-डकैती आदि पंजाब के जन-जनपन का अभिन्न भाग है । अलग-अलग दृश्यों का क्रम है । उपन्यास का अंत आते-आते गदर की चर्चा, पहला महायुद्ध आदि के साथ उपन्यास का समापन हुआ है ।

'ज़िंदगीनामा' में कृष्णाजी ने न केवल अपनी पूर्व सीमाओं का अतिक्रमण किया है, बल्कि अपने पंजाबी लहजे और साहसिक वर्णन द्वारा इन दोनों का अत्यन्त सृजनात्मक उपयोग भी किया है। यह कार्य उन्होंने बड़े पैमाने पर किया है। उपन्यास का महत्व इस दृष्टि से है कि उसने एक ऐसे उपन्यास की रचना की है, जो हिंदी उपन्यास की सीमाओं को भी विस्तृत करता है। इसमें चित्रण इतना सजीव हो गया है कि पुस्तक को हाथ में पकड़े हुए पाठक थोड़ी देर केलिए भूल जाता है कि वह देख रहा है, पढ़ नहीं रहा है।

कुल मिलाकर कहा जा सकता है कि कृष्णा सोबती भारतीय जीवन, समाज तथा अपनी धरती के साथ एकाकार हुई लेखिका हैं। उनका जीवन साधारण होते हुए भी असाधारण है। 'ज़िंदगीनामा' लोगों के जीवन का दस्तावेज़ है।

संदर्भ

1.कृष्णा सोबती : व्यक्ति एवं साहित्य - डॉ.ब्रिजिट पॉल, पृ.27; वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली।

2. समकालीन हिंदी उपन्यास : कथ्य विश्लेषण - डॉ. प्रेमकुमार, पृ.33; जवाहर पुस्तकालय, मथुरा।

3. महिला उपन्यासकारों की रचनाओं में वैचारिकता - डॉ.शशि जैकब, पृ.53; जवाहर पुस्तकालय, मथुरा।

4. साठोत्तर हिंदी उपन्यास में नारी - डॉ.नीलम मैगजीन गर्ग, पृ.77; इन्दु पुस्तकालय, अलीगढ़।

5. 'ज़िंदगीनामा', कृष्णा सोबती, पृ.82; राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली।

◆पूर्व अध्यक्षा, हिन्दी विभाग
एस एन कॉलेज
कोल्लम।
फोन -9387886823

सही उत्तर चुनें

(पृ.सं.16 के आगे)

7.'हम हशमत' किस विधा की रचना है?

(अ) साक्षात्कार

(आ) संस्मरण

(इ) आत्मकथा

(ई) उपन्यास

8.शिवनाथ जी ने किस उपन्यास का अंग्रेज़ी में अनुवाद किया ?

(अ) ऐ लड़की

(आ) मित्रो मरजानी

(इ) चन्ना

(ई) जैनी मेहरबान सिंह

9.'बादलों के घेरे' में कितनी कहानियाँ संकलित हैं?

(अ) 20

(आ) 24

(इ) 25

(ई) 26

10.'चन्ना' उपन्यास कब प्रकाशित हुआ?

(अ) सन् 2010

(आ) सन् 2014

(इ) सन् 2018

(ई) सन् 2019

(शेष पृ.सं. 37)

कृष्णा सोबती की कहानियों में बाल मनोवैज्ञानिकता

♦ डॉ. सुधा.ए.एस

सन् 1925 से लेकर सन् 2018 तक गद्य की विविध विधाओं पर लेखनी चलानेवाली हिन्दी साहित्य जगत के सशक्त हस्ताक्षर श्रीमती कृष्णा सोबती जी की मृत्यु 25 जनवरी 2019 को हुई है। उनकी आत्मा को शतकोटि श्रद्धांजलियाँ अर्पित करती हुई, उनकी कहानियों के बाल पात्रों का मनोविश्लेषणात्मक अध्ययन करने का एक छोटा-सा प्रयास है प्रस्तुत लेख। कृष्णाजी, पूरा नाम कृष्णा पृथ्वीराज सोबती एक पंजाबी नारी है। वे अपने जीवन में सदा सादगी की कायल रही हैं। अपनी ज़िन्दादिल व्यक्तित्व एवं निड़रता के कारण अपनी 93 साल की अवस्था में भी वे मन से जवान थीं। वे सदा उत्साही, ताज़ा और नित्य नयी सोच की नारी थीं। लोकतंत्र में विश्वास रखनेवाली आशावादी लेखिका कृष्णाजी मूलतः एक स्पष्टवादी थीं। अपने उपन्यासों की नायिकाओं जैसे उनके आचार, विचार और व्यवहार में खुलापन था। वे सदा चिन्तन मग्न रहती थीं। स्वतंत्र देश में वे नारी स्वतंत्रता की प्रेरक शक्ति थीं।

कृष्णाजी की सभी रचनाएँ 'राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली' से प्रकाशित हुई हैं। 'डार से बिछुड़ी' (1958), 'मित्रो मरजानी' (1967), 'सूरज मुखी अंधेरे के' (1972), 'ज़िन्दगीनामाः जिन्दारुख' (1979), 'दिलो दानिश' (1993), 'समय सरगम' (2000) आदि उनके उपन्यास हैं। सन् 1968 में प्रकाशित 'यारों के यार' और 'तिन पहाड़' लघु उपन्यास हैं। सन् 1991 में लंबी कहानी 'ऐ लड़की' और सन् 1980 में 'बादलों के घेरे' (कहानी संकलन) का प्रकाशन हुआ है। तीन संस्मरणात्मक ग्रन्थ ('हम हशमत्'- एक, दो, तीन, चार) और दो कविता संग्रहों का भी प्रकाशन हो चुका है। 'जैनी मेहरबान सिंह' (पटकथा), 'सोबती एक सोहबत', 'शब्दों के आलोक में', 'सोबती - वैद संवाद', 'बुद्ध का कमंडल-लद्दाख' जैसे विविध ग्रंथ भी उनके द्वारा रचित हैं।

उनके उपन्यासों की संख्या कम है। लेकिन इन उपन्यासों में कृष्णाजी ने स्त्री की अस्मिता एवं सामाजिक रुझान की क्षमता को ही व्यक्त किया है। 'डार से बिछुड़ी' में अनमेल विवाह के कारण ज़िन्दगी बरबाद हो जानेवाली पाशो के मानसिक संघर्ष को मनोवैज्ञानिक ढंग से चित्रित करने के साथ पंजाब की ग्रामीण संस्कृति का सजीव एवं साकार रूप भी दर्शनीय है। साहसिकता के साथ मित्रो जैसी पात्र की सृष्टि करनेवाली कृष्णाजी ने 'मित्रो मरजानी' में एक निर्भीक वाचाल रूपवती नारी के द्वारा अपनी दृष्टि को सक्रिय रूप दिया है। 'सूरजमुखी अंधेरे के' की रत्ती की तुलना सूरजमुखी फूल से करके कृष्णाजी ने उस अभिशप्त नारी की ज़िन्दगी को असफलताओं के घोर अंधेरापन से आशाओं का सूरजमुखी बनाया है। ग्रामीण जन-जीवन के वातावरण पर लिखा गया उपन्यास है 'ज़िन्दगीनामा'। पारिवारिक समस्याओं पर आधारित सशक्त उपन्यास है 'दिलो

दानिश'। बुर्जुगों के मनोभावों को सूक्ष्म स्तर पर अभिव्यंजित करनेवाला उपन्यास 'समय सरगम' में भी सशक्त नारी पात्रों का चित्रण है। सरकारी दफ़्तर की सजीव झाँकी 'यारों के यार' में मिलती है। वृद्धावस्था एवं मृत्यु के धीरे - धीरे आगमन को बहुत खूबसूरती से 'ऐ लड़की' में दर्शाया गया है।

सन् 1944 से 1959 तक के पन्द्रह वर्षों की कालावधि में लिखी गई चौबीस कहानियों का संग्रह है 'बादलों के घेरे'। कुछ कहानियाँ बहुत छोटी हैं, तो कुछ लंबी। हरेक कहानी मनोवैज्ञानिक धरातल पर लिखी गयी है। कहानियों में आधुनिक जीवन की निस्संगता, रिक्तता, अकेलापन, मानव-संबन्धों की उलझन, अलगाव, वैयक्तिक द्वन्द्व, अस्तित्व के प्रति द्वन्द्व आदि की मनोवैज्ञानिक साहित्यिक अभिव्यक्ति है। इनमें बाल मानसिकता को व्यक्त करनेवाली कहानियाँ हैं 'टीलो ही टीलो', 'नफीसा', 'मेरी माँ कहाँ' और 'लामा'।

सन् 1954 अगस्त में लिखी गयी कहानी 'टीलो ही टीलो' में टीलो खेल द्वारा खिलाड़ी प्रवृत्ति के बच्चों की मानसिकता का चित्रण है। इसमें बब्बू, पप्पी, रज्जो, सुक्कू, दम्मो, रज्जू जत्ती, मीनू, बंसी, रंजी, कालू आदि बच्चे दो टीमों में बंटकर खेल रहे थे। बच्चे टीलो ढूँढ़ते हुए वन में घूम रहे थे। अचानक पप्पी एक गड्ढ़े में ओझल हो गया। सभी बच्चे सहम होकर पप्पी की खोज करने लगे। सारे के सारे परिश्रम के बाद भी उसे न मिलने पर सभी बच्चे निराश एवं दुःखी होकर घर लौटे। अंत में पप्पी के पिताजी दो सिपाहियों के साथ मृत शरीर को सफेद कपड़े से ढाँककर लाए। सभी मित्र पप्पी से बिछुड़ने के दुःख में निराश होकर बैठे थे। जत्ती ने स्वप्न में देखा कि पप्पी रज्जो को जिताने की बात कर रहा है। सबेरे उठने पर पप्पी की माँ ने जत्ती को पास बुलाकर अपने बेटे के बारे में पूछा। जत्ती सिसककर स्वप्न की बात बताने लगा। पप्पी की माँ जत्ती की आवाज़ में पप्पी की आवाज़ खोजती रही।

प्रस्तुत कहानी में टीलो खेल द्वारा बच्चों की मानसिकता एवं संवेदनशीलता, स्पर्धा, सामूहिकता आदि मनोविज्ञान के कई पहलुओं के बारे में बताया गया है। बच्चों के मन में दूसरे बच्चों के प्रति स्नेह और मिलने - जुलने की भावना भी रहती है। जब जत्ती पप्पी से पूछता है कि तुम किस टोली में हो, तब वह कहता है - 'जत्ती भैया, तुम नहीं जानते, जो हारने लगता है, मैं तो उसी के साथ ही जाता हूँ - यह देखो, दोनों रंग हैं, अपनी जेब में।" (बादलों के घेरे, पृ.सं. 88)।

प्रस्तुत कहानी में स्वप्न का वर्णन भी है। बच्चों के स्वप्न अर्थहीन नहीं होते, वे पूर्ण और समझ में आने योग्य मानसिक कार्य भी हैं। वे छोटे, स्पष्ट, सुसम्बद्ध एवं समझने में आसान भी होते हैं। पिछले दिन के अनुभव की एक प्रतिक्रिया के रूप में जत्ती के स्वप्न का चित्रण हुआ है। जब जत्ती ने इस स्वप्न के बारे में पप्पी की माँ से कह दिया तब उसका प्रभाव, माँ पर पड़ा। वह जत्ती की आँखों में पप्पी को ढूँढ़ती रही। इसप्रकार स्वप्न के विभ्रमात्मक स्वरूप का चित्रण करके कृष्णाजी बाल मनोवैज्ञानिकता की अनुभूति से पाठकों का हृदय द्रवित करती हैं।

सन् 1944 जनवरी में लिखी गयी 'नफीसा' सात साल की मासूम लड़की की दर्दभरी कहानी है। एक असाध्य रोग से पीड़ित नफीसा के अब्बा और अम्मी अस्पताल के जनरल वार्ड के कोने में उसे

छोड़कर चले गये। रात में उसे डर लगता है। अपने अब्बा और अम्मी के पास सोना चाहती है, अपने भाई-बहनों के साथ खेलना चाहती है। जीवन का मोल न जाननेवाली वह छोटी-सी बच्ची मौत को भी नहीं पहचानती। जीवन और मृत्यु के बीच टकराती मासूम बच्ची की करुण मनोव्यथा ही पूरी कहानी में चित्रित की गयी है। अंत में जीवन छोड़ जाने का अनायास वर्णन देखिए - "अब वह नन्ही - सी लड़की आँखें बन्द कर लेगी, थककर सो जायेगी, दूर - बहुत दूर कहीं खो जायेगी.... जहाँ से उसे न उसके अब्बा ला सकेंगे, न अम्मी...।" (बादलों के घेरे, पृ.सं. 168)।

अकेलापन एवं प्यार की कमी के फलस्वरूप बच्चों की मानसिकता के बदलाव का सूक्ष्म मनोवैज्ञानिक चित्रण करने में 'नफीसा' कहानी में लेखिका सफल हुई हैं। बीमार बच्ची के जीवन की विवशता, असहाय घुटन एवं अन्तर्द्वन्द्व प्रभावी ढंग से उद्‌घाटित किया गया है। मनोविज्ञान के 'मृत्यु-बोध' के रहस्य को इसप्रकार उजागर किया गया है कि मृत्यु बोध का प्रभाव बाल-मन पर उतना नहीं होता है। इसलिए मृत्यु के स्वरूप, भय, संत्रास आदि का वर्णन लेखिका ने अपनी ओर से किया है ताकि नफीसा के मन में मृत्यु की भयानकता की तीव्र अनुभूति नहीं है।

सन् 1949, नवंबर में लिखी गयी कहानी है 'मेरी माँ कहाँ'। भारत-विभाजन के दौरान अपनी माँ - बाप से बिछुड़ गयी लड़की की यह कहानी तत्कालीन हिंसा तथा भावात्मक पीड़ा को व्यक्त करती है। इसका नायक यूनस खाँ है, लेकिन लड़की का नाम कृष्णाजी ने नहीं बताया है। ब्लोच रेंजिमेंट का बहादुर सिपाही यूनस खाँ, सड़क के किनारे घायल, खून से भीगी एक लड़की को देखकर भावुक हो उठता है। उस लड़की को देखकर उसे अपनी मृत बहन की याद आती है। मूर्च्छित लड़की यह नहीं जानती है कि इसके हाथ ने ही अपने भाई को मार दिया था। लेकिन लड़की यूनसखाँ को देखकर डर जाती है। वह सोचती है कि यूनस उसे मार डालेगा। यूनस का हाथ पकड़कर रोनेवाली मासूम लड़की की मानसिकता को कृष्णाजी ने सही ढ़ंग से चित्रित की है। देश-विभाजन के कारण होनेवाली विकल मानसिकता, संबन्धों की सहजता एवं अकेलापन को कलात्मकता से प्रस्तुत करने में लेखिका इस कहानी में सफल हुई हैं।

भारत विभाजन के दौरान हुए दंगों से मूर्च्छित हुई बच्ची के संत्रास का चित्रण लेखिका ने इन शब्दों में किया है - "बच्ची बड़ी - बड़ी आँखों से देखती है - उसकी आँखों में डर है, घृणा है और आशंका है। खान, मुझे मत मारना - मरना मत...।" (पृ.सं. 172-173) "एकाएक लड़की खान की छाती पर मुट्ठियाँ मारकर चीखने लगी - मुझे कैम्प में छोड़ दो - छोड़ दो मुझे।... तुम मुसलमान हो - तुम....। मेरी माँ कहाँ है! मरा भाई कहाँ है! मेरी बहन कहाँ-" (पृ.सं. 173)। मानवीय सद्‌भाव के साथ अस्तित्व की यातना को यथार्थ की भावभूमि पर उतारने केलिए कहानी में लेखिका का जो प्रयास है वह बहुत सराहनीय है।

सन् 1944 मई में लिखी गई कहानी है 'लामा'। बच्चों की कोमल भावनाओं के साथ बालसुलभ जिज्ञासावृत्ति का वर्णन प्रस्तुत कहानी में हुआ है। जब लेखिका बच्ची थीं, तब बूढ़े लामा को चिढ़ाती थीं। एक दिन नौकरानी से पता चला कि लामा मर गया। सब बच्चे खुश हुए, क्योंकि 'मर गया' शब्द का असली

अर्थ उनको समझ में नहीं आया। लेखिका बड़ी हो जाने पर किसी भिखारी के शब्द सुनने पर वे बाहर देख लेती हैं कि वह लामा है या नहीं? लामा से पूछने के लिए उनके पास प्रश्नों की स्मृतियाँ हैं। बूढ़े लामा की इस संस्मराणात्मक कहानी के द्वारा बाल-मन की मनोवृत्तियों तथा शंकाओं की परिकल्पना बहुत ही सूक्ष्मता के साथ की गई है। बचपन की भोली स्मृतियाँ बड़ा हो जाने तक द्वन्द्व पैदा करती हैं। इस मनोवैज्ञानिक बिन्दु को केन्द्र में रखकर बच्चों की जिज्ञासावृत्ति को सुन्दर ढंग से अभिव्यक्ति दी गयी है।

'बदलों के घेरे' की हरेक कहानी मनोवैज्ञानिक घरतल पर लिखी गई है। अधिकांश कहानियाँ नारी मानसिकता को व्यक्त करनेवाली हैं। अशिक्षित नारी, विधवा नारी, वृद्ध नारी आदि भिन्न अवस्थाओं और अलग-अलग मनोवृत्तिवाली नारी पात्रों की मानसिक अवस्थाओं का चित्रण करके आज के परिवर्तित युग के संघर्षमय मानव मन की सूक्ष्माभिव्यक्ति मनोवैज्ञानिक सिद्धान्तों के आधार पर की गयी है। 'बादलों के घेरे' संकलन की चौबीस कहानियों में चार कहानियाँ - 'टीलो ही टीलो', 'नफीसा', 'मेरी माँ कहाँ', 'लामा' - ऐसी बाल मानसिकता का विश्लेषण कर रही हैं। बच्चों के खेल और स्वप्न में मनोविज्ञान की साहित्यिक अभिव्यक्ति हुई है। इस प्रकार कृष्णा जी ने बाल मानसिकता पर आधारित कहानियाँ भी संग्रहीत करके 'बादलों के घेरे' को हिन्दी मनोवैज्ञानिक कहानी साहित्य में अमर रख दिया है।

आधार ग्रंथ

1. बादलों के घेरे - कृष्णा सोबती।

संदर्भ ग्रंथ

1. कहानी : संवाद का तीसरा आयाम - बटरोही; नाशनल पब्लिशिंग हाउस, नई दिल्ली; 1983
2. कृष्णा सोबती का कथा साहित्य एवं नारी समस्याएँ - डॉ. शहेनाज; अभय प्रकाशन, कानपुर;2009
3. कृष्णा सोबती की कहानी कला - सुप्रिया.पी; जवाहर पुस्तकालय, मथुरा; 2008

♦ असिस्टन्ट प्रोफसर
हिन्दी विभाग, यूनिवर्सिटि कॉलेज
तिरुवनन्तपुरम, केरल राज्य।
फोन : 9497853785

डॉ.एस.तंकमणिअम्मा को बिहार हिन्दी साहित्य सम्मेलन का शताब्दी पुरस्कार

डॉ.एस.तंकमणिअम्मा (पूर्व अध्यक्षा, हिन्दी विभाग, केरल विश्वविद्यालय ; अध्यक्षा, अखिल भारतीय हिन्दी अकादमी) हिन्दी भाषा और साहित्य को समग्र सेवा केलिए बिहार हिन्दी साहित्य सम्मेलन का शताब्दी पुरस्कार प्राप्त हुआ। 26 मार्च 2019 को पटना में आयोजित कार्यक्रम में गोवा राज्यपाल माननीय मृदुला सिन्हा ने पुरस्कार प्रदान किया।

समय एवं समाज की लेखिका

♦ डॉ.जी.चन्द्रवदना

अपने संपूर्ण जीवन को साहित्य के लिए समर्पित लेखिका कृष्णा सोबती हमेशा स्वाभिमान, निडरता और स्वतंत्रता पर विश्वास करती थीं। अपने इस विश्वास का भंजन कभी भी उनकी वैयक्तिक एवं साहित्यिक ज़िन्दगी में नहीं हुआ। बहुत सारी विशेषताओं से युक्त कृष्णाजी का वैयक्तिक एवं साहित्यिक जीवन नई पीढ़ी को आदर्श नमूना ही रहेगा, इसमें कोई तर्क नहीं है। साहित्यकार या लेखक आज जो कहते हैं, शायद वह आज की बात नहीं होगी तो कल की बात ज़रूर बन जाएगी। विभाजन की त्रासदी की शिकार बनी कृष्णाजी हमेशा यह समझती थीं कि भारतीय समाज में कभी भी जाति, धर्म एवं लिंग के नाम पर अवश्य विभाजन होंगे। अतः अपने परिसर की गतिविधियों में सतत जागरूक एवं सतर्क बनी रहती थीं।

जब उन्हें होश आया तभी से विश्व की, विशेषकर भारत की चाल-चलन के निरीक्षण से पहचानती थीं कि पहले विभाजन रियासत के बढ़ावे केलिए था, तो बाद में विभाजन जीवन (हर क्षेत्र में) में अपनी जगह की प्रतिष्ठा केलिए है। लेकिन कृष्णाजी को वैयक्तिक जीवन में हो या सहित्यिक जीवन में अपनी जगह केलिए किसी समझौते की ज़रूरत नहीं थी। पंजाबी, उर्दू एवं हिन्दी भाषा की निपुण लेखिका ने स्त्री के यौनजीवन की गुप्तता को अपनी रचनाओं जैसे- 'बादलों के घेरे में', 'यारों के यार', 'मित्रो मरजानी', 'सूरजमुखी अंधेरे के' के पात्रों के मुँह से पुरुषजगत के सामने अनावृत किया। 'मित्रो मरजानी' में मित्रो का कथन देखिए - "अब तुम्हीं बताओ, जिठानी, तुम जैसा सतबल कहाँ से लाऊँ ? देवर तुम्हारा मेरा रोग नहीं पहचानता !...बहुत हुआ हफ्ते पखवारे....और मेरी इस देह में इतनी प्यास है, इतनी प्यास कि मछलीसी तडपती हूँ।" याद करने की बात यह है कि उस समय आज बहुप्रचलित नारी अस्मिता, नारी मुक्ति, नारीवाद और नारी विमर्श आदि शब्दों की आहट भी नहीं थी। पुरुष जगत में अपरिचित स्त्रीभाषा का हलचल मचा था। लेकिन निर्भीक व्यक्तित्ववाली कृष्णाजी ने भाषा के 'बोल्ड्नेस' से यह साबित किया था कि लोकतंत्र में स्त्री और पुरुष को अलग-अलग भाषा नहीं है। कथा साहित्य से सोबतीजी ने भारतीय समाज स्त्री पर अंकित सारी परिकल्पनाओं को भावना से नहीं तर्क से तोड़-मरोड़कर नारी- अस्मिता को एक नया आयाम प्रदान किया।

छोटे हो या बड़े हो, सबको समकक्ष मानना कृष्णाजी का विशेष स्वभाव था। 'संस्मरण' हिन्दी साहित्य में एक नई विधा नहीं है। लेकिन कृष्णा जी के संस्मरण 'हम हशमत' की विशेषता यह है कि अपने समय के वरिष्ठ लेखकों के साथ-साथ अपनी उम्र से करीब पचास साल छोटे लेखकों को भी उसमें शामिल

किया गया है। वर्तमन समय ऐसे माहौल का है कि जो (पत्रकार ,लेखक या साहित्यकार) शासनतंत्र के विरुद्ध आवाज़ उठाते हैं, उन्हीं का गला घोटने या निशब्द बनाने की साजिश करते हैं। ऐसी 'असहिष्णुता की संस्कृति' के विरुद्ध कृष्णाजी ने भी अपनी प्रतिक्रिया व्यक्त करके प्रतिरोध के रूप में सन् 1996 में मिला साहित्य अकादमी का सर्वोच्च फेलोशिप वापस कर दिया था और 'पद्मविभूषण', 'शलाका सम्मान' जैसे बड़े-बड़े पुरस्कार लेने से भी इनकार किया। 'ज्ञानपीठ पुरस्कार' की राशी को साहित्य एवं भाषा के संवर्धन हेतु प्रयत्नरत एक फौन्डेशन को देकर कृष्णाजी ने खुद यह साबित किया कि 'जीवन मानो साहित्य है'। कृष्णाजी किसका पक्षधर है - इसका प्रमाण है मुक्तिबोध पर आधारित उनकी 'मुक्तिबोध : एक व्यक्तित्व सही की तलाश में' रचना। साठ साल के पहले लिखा हुआ उनका उपन्यास 'चन्ना' का प्रकाशन भी उनके देहवसान के कुछ हफ्ते पहले हुआ था,शायद इस उपन्यास के प्रकाशन से उनका साहित्यिक मन प्रसन्न हुआ होगा।

'तर्ज बदलिए' और 'वैदिक है क्रांति' कविताओं में स्वाभिमानी कृष्णाजी स्वतंत्रता, समता, न्याय केलिए सरकार से तर्ज बदलने का आह्वान देने के साथ-साथ शासनतंत्र की वर्तमान दिशा एवं दशा पर परेशान भी होती हैं। पंक्तियाँ देखिए-

सरकारें क्यूँ भूल जाती हैं
कि हमारा राष्ट्र एक लोक तंत्र है
और यहाँ का नागरिक
गुलम दास नहीं
वो लोकतांत्रिक राष्ट्र भारत महादेश का
स्वाभिमानी नागरिक है
रियासत का यह तर्ज बदलिए।

(तर्ज बदलिए, 2016)

गायों को बचाओ
और नागरिकों को मारो
देवी-देवताओं की
यही है आज्ञा
:::::::::.
.....
न कचहरी/न पुलिस/
इत्ते अच्छे दिन/
इस देश पर कब आयेंगे।

(वैदिक है क्रांति, 2017)

श्रीशंकराचार्य संस्कृत विश्वविद्यालय के प्रादेशिक केन्द्र एट्टुमानूर में 'कृष्णा सोबती का अवदान' विषय पर त्रिदिवसीय राष्ट्रीय संगोष्ठी चलायी गयी थी। इसमें कृष्णा सोबती के अवदान की पूरी चर्चा की गयी थी। जन्म शताब्दी तक कृष्णाजी हमारे बीच में रहेंगी, यह कामना की थी। लेकिन, गणतंत्र दिवस के एक दिन पहले जीवन का चिरंतन सत्य-मृत्यु-की गोद में कृष्णाजी विलीन हुई हैं यह वार्ता हमारे कानों में पड़ी। उस पुण्यात्मा को मेरा नमन!!!

◆ असिस्टन्ट प्रोफसर
एस एस यु एस प्रादेशिक केन्द्र
एट्टुमानूर।
फोन- 9447112663

'यारों के यार' में दफ्तरी माहौल

♦ डॉ. बिन्दु सी आर

भाषा जो भी हो साहित्य को संपन्न बनाने में महिला लेखिकाओं की भूमिका हमेशा महत्वपूर्ण बनकर आ रही है। हिंदी भाषा एवं साहित्य भी इसका अपवाद नहीं। प्रत्येक समय का प्रतिनिधित्व करते हुए जिन-जिन महिला लेखिकाओं का उदय हिंदी साहित्य में हुआ है, उनमें श्रीमती कृष्णा सोबती का स्थान शिखर स्तर पर है। वे तत्कालीन समाज की समस्याओं को विशेषतः नारी की समस्याओं को शब्द चित्र देने में सफल बन गयी है।

श्रीमती कृष्णा सोबती का जन्म सन् 1925 को गुजरात में हुआ। विभाजन के बाद वह पाकिस्तान का बन गया, तब आप सपरिवार भारत में बसीं। पचास के आसपास से लेकर आपने साहित्य-रचना शुरू की। पहले कहानी लेखन किया। आपकी पहली कहानी 'यामा' सन् 1950 को प्रकाशित हुई। बाद में उपन्यास, कहानी, संस्मरण, जीवनी, यात्राविवरण आदि क्षेत्रों में आपने अपनी तूलिका चलाई। कविता भी आपसे अछूत नहीं रही। विभाजन, आज़ादी और स्वतंत्र संविधान आदि तीन प्रत्येक समय से गुज़र करके आपने अपनी रचनाओं में भी इसकी झलक दिखाई है। अपनी साहित्यिक सेवाओं के लिए कई पुरस्कारों से आप सम्मानित हुई हैं। सन् 1981 में 'साहित्य शिरोमणि पुरस्कार', 1982 में 'हिंदी अकादमी पुरस्कार', 2000-2001 में 'शलाका पुरस्कार' और 2017 में 43 वाँ 'ज्ञानपीठ पुरस्कार' भी देकर देश ने उन्हें आदर किया है। आपकी साहित्यिक विभूतियाँ इस प्रकार हैं। 'बादलों के घेरे'- आपका कहानी संग्रह है। 'सूरज मुखी अंधेरे के', 'ज़िन्दगी नामा', 'दिलो दानिश', 'समय सरगम' आदि आपके विख्यात उपन्यास हैं। इसके अलावा आपने आख्यायिका में एक विशिष्ट शैली को अपनाया- लम्बी कहानी के रूप में। इसके अंतर्गत आनेवाले आपकी रचनाएँ हैं – 'यारों के यार' और 'तिन पहाड़'। लेकिन आज ये उपन्यासों के रूप में मान्यता प्राप्त की है। संस्मरण के क्षेत्र में 'हम हशमत', 'सोबती एक सोहबत', 'शब्दों के आलोक में', 'मुक्तिबोध : एक व्यक्तित्व' सही की तलाश में' आदि प्रमुख हैं।

साहित्य में कभी-कभी ऐसी रचनाओं का उदय होता है, जो पाठक को घटित घटना जैसी प्रतीति उत्पन्न करनेवाले होते हैं। कृष्णा सोबती की रचनाएँ पाठकों को ऐसे धरातल पर पहुँचाती हैं कि पढ़ते समय उसके कथ्य पर सोचने को प्रेरित होते हैं। 'यारों के यार' आपकी एक ऐसी रचना है जिसे पढ़ते समय वास्तविकता के धरातल पर हम पहुँच जाते हैं। सोबती ने प्रस्तुत उपन्यास में समकालीन समाज की विडंबनाओं पर प्रकाश डाल दिया है। समकालीन जनता स्वार्थी है। अपनी स्वार्थता से बाहर निकलने को वे तैयार नहीं। अपने .....की ओर चिंतन

करनेवालों या स्वार्थता से बाहर आनेवालों को यहाँ जीना मुश्किल है याने लोग इन्हें जीन नहीं देते। ऐसी चिंतावाला व्यक्ति है 'यारों के यार' का अवाली बाबू।

एक सरकारी दफ़्तर के अंदर की दुनिया की सच्चाई यहाँ हम देख सकते हैं। नौकरी में छुट्टी पाने की इंतज़ार में दफ़्तर का कामकाज तमाम करके बड़े साहब के पास जानेवाले अताली बालू को तिरस्कार की दृष्टि देखनी पड़ती है। बेटे के घायल होने की खबर सुनने पर भी बेटे को अस्पताल ले जाने का निर्देश देकर कम में लीन हो गया। फिर बेटे की मृत्यु की खबर आयी तो वह दोस्तों के साथ घर पहुँचा और अपने को कोसते हुए रहा। बेटे की यादें उसे पीड़ा देती रहती हैं। उसकी छोटी-छोटी आवश्यकताओं को पूर्ति न कर सकने के कारण वह दुखी बन गया। अपनी नौकरी को सुरक्षित रहने के मोह से दूसरे दिन वह दफ़्तर की ओर निकला तो आलस्य की अवस्था देखकर वह बोला - "इस पागली को समझाओ अम्मा, जिस बात पर इंसान का बस नहीं, उसकी खातिर कितना दुःख मनाएगी। ..... तबीयत नहीं, पर क्या करूँ, छाती पर पत्थर रखे चला जा रहा हूँ।"[1] दफ़्तर जाते वक्त वह टंकक से हेड क्लर्क तक की यात्रा के बारे में सोचता है। रोज़ की तरह दफ़्तर में सस्ती तमाशाएँ, हँसी-मज़ाक, आपस में उपहास, काना-फूसी आदि चलते रहे। मन को पत्थर बनाकर वह काम में लीन हो गया। फिर भी निंदक लोग उनका पीछा नहीं छोड़ते। शर्मा और बख्शी इसके उत्तम उदाहरण हैं। "क्या कायम- मिज़ाज पाया है कल बेटा गया और आज रज़रत हाज़िर, पूछिए साहब! छुट्टी कर लेने से क्या कुर्सी लुटी जाती थी!"[2] अपनी हालत को बिगाड़ते जानते हुए भी वह एक कर्मचारी का दायित्व पूर्ण रूप से निभाने की कोशिश करता है।

सोबती ने यहाँ कार्यालयों के अंदर होनेवाले मर्यादा के उल्लंघन एवं भ्रष्टाचार का तीखा व्यंग्य किया है। सीधे-सादे तरीके से काम करते चले जाने पर भवानी बाबू को कभी-कभी सहवर्तियों ने मुकदमों में डालने की कोशिश की।

उपन्यास में चित्रित और दो महिला पात्र हैं तमाशा और तमन्ना। मध्यवर्गीय नारियों की सारी विडंबनाओं को सहने को वे तैयार हैं। हमारा देश भारत पौराणिक काल से लेकर आधुनिक काल तक नारियों को एक मान्यता देकर आ रहा है। लेकिन सोबतीजी के ये दो नारी पात्र स्वयं अपने को बिगड़ने के लिए तैयार हैं। उपन्यास में सोबतीजी ने इसकी ओर इशारा किया है। यहाँ महिलाओं को शतरंज की मुहरों जैसा चित्रित किया है। अलग-अलग रूपों में भ्रष्टाचार का शिकार बनकर वे आती हैं। तमन्ना और तमासा जैसी औरतों ने अपने को इस भ्रष्ट समाज की ओर खींच लिया है उससे बचना उनके लिए मुश्किल है। मर्दवादी हालत से वे बच नहीं सकतीं। कर्मचारियों की गणना में वे उन्हें नहीं मानते। केवल भोग की चीज़ों के रूप में मानते हैं। सरदार हज़ारा सिंह, प्यारा सिंह जैसे व्यापारियों ने टैण्डर, ठेके और लाइसेन्स' केलिए सुरा-सुंदरियों को भेंट देते हैं जिससे तमन्ना का बहुत फायदा उठाया जाता है। यहाँ सेबतीजी ने नारी को बेटी, बहन, माँ, पत्नी जैसे पवित्र रूप से नीचे होकर अपने

को कभी-कभी भोग एवं धन कमाने की उपाधि माननेवाले उनके रूपों को भी चित्रित किया है। इस पर सोबतीजी की चिंता व्यक्त है। सोबती जी की राय में जिसको स्वयं बचने की इच्छा नहीं उनकी रक्षा ईश्वर भी कर नहीं सकता।

आधुनिक नारी के इस व्यवसायिक मनोभाव को कृष्णा जी ने इस उपन्यास में व्यक्त किया है। तमन्ना नामक और एक नारी पात्र को सोबतीजी ने एक आधुनिक वारांगना का स्थान दिया है। अपनी देह को पैसा कमाने की चीज़ मानकर कमाती रहती है।

सोबती जी का उपन्यास 'यारों के यार' सनाज का एक खुला चित्रण है। वह एक ऐसा दर्पण है जिसकी ओर से तत्कालीन समय की कपटता पाठक देख सकेत हैं। आजकल आदमी इतना स्वार्थी बन गया है कि उसके आगे सत्य, धर्म, न्याय आदि के लिए कोई स्थान नहीं है। समाज इतना बदल गया है कि एक ओर नारी के प्रति अत्याचार रोकने की कोशिश चलती रहती है तो दूसरी ओर नारी धन-संपत्ति और सुख-सुविधा पाने के लिए अपने को स्वयं कष्ट कर देती है। सोबतीजी के समान हम पाठक भी ऐसी प्रतीक्षा कर सकते हैं कि समाज ज़रूर बदलेगा।

नारीवादी लेखिका कृष्णा सोबती की प्रायः सय सभी कथा रचनाएँ स्त्री शाक्तीकरण तथा नारी चेतना के लक्ष्य में लिखी गयी हैं। दफ़्तरी माहौल में लिखा गया 'यारों के यार' उपन्यास भी इससे भिन्न नहीं है। इसमें कामकाजी नारियों को पूरी वास्तविकता के साथ चित्रित किया गया है।

संदर्भ

1.'यारों के यार' कृष्णा सोबती, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, पृ.सं.16
2. वही पृ.सं. 19

♦ अध्यापिका,
सरकारी हयर सेकेंटरी स्कूल
कोल्लम।
फोन - 9495392918

श्रद्धांजलि : प्रो.रोहिताश्व

प्रो.रोहिताश्व (भूतपूर्व विभागाध्यक्ष तथा भूतपूर्व डीन, गोवा विश्वविद्यालय; हिन्दी लेखक) का जन्म 2 अगस्त 1950 को हैदराबाद में हुआ। पढ़ाई हैदराबाद में हुई। शुरू में हैदराबाद के कुछ महाविद्यालयों में अस्थायी रूप से अध्यापन किया। फिर गोवा विश्वविद्यालय में स्थायी नियुक्ति मिली। पुनश्चर्या पाठ्यक्रमों तथा राष्ट्रीय संगोष्ठियों में साहित्यिक विषयों के वक्ता थे। हिन्दी क्षेत्र में अपने वक्तव्यों द्वारा दक्षिण भारत के हैदराबाद की पहचान बढ़ा ली। गोवा विश्वविद्यालय से सेवानिवृत्त होने के बाद हैदराबाद में स्थायी रूप से रह रहे थे।

पूरा नाम है 'बालकृष्ण शर्मा रोहिताश्व'। हिन्दी साहित्य जगत में तथा मित्रों के बीच केवल 'रोहिताश्व' नाम से जाने जाते थे। उनका संपर्क केवल हिन्दी साहित्य जगत से नहीं था, उर्दू तथा तेलुगु से भी था। वे अच्छे अध्यापक थे, अध्येता भी थे। 16 फरवरी 2019 को वे स्वर्गस्थ हुए। स्वर्गीय रोहिताश्वजी को 'अखिल भारती हिन्दी अकादमी' के सदस्य श्रद्धांजलि अर्पित करते हैं।

हिन्दी की सौंधी महक कृष्णा सोबती (संस्मरण)

♦ डॉ.रंजीत रविशैलम

यादें उमड़ रही हैं। कृष्णा सोबती जी के ब्रह्मलीन से उत्पन्न पीड़ा मुझे सता रही है। हिन्दी माँ की विराट विरासत में कृष्णाजी का हिस्सा बहुत बड़ा था। निष्कलंक निस्वार्थ सृजना शक्ति के बल पर वे माँ हिन्दी की प्रिय पुत्री बनी थीं। उनकी भाषा प्रौढ़ थी। लिखते वक्त पात्रानुसार परिवेशानुसार भाषा का प्रयोग करना, बोलते वक्त सरल भाषा का प्रयोग करना, 'साक्षात्कार' में प्रौढ़, मगर सरल भाषा का प्रयोग करना कोई कृष्णाजी से सीखे। यानि वे भाषा की जादूगरनी थीं।

ऐसे तेजस्वी व्यक्तित्व से परिचय प्राप्त करना हर किसी की चाहत होती है। मैंने भी चाहा। मेरी परम पूज्य गुरुवर्य डॉ.पी.लता जी, जो कृष्णाजी की घनिष्ठ एवं अंतरंग हैं, के निदेश - आशीर्वाद से उनसे मिलने का मेरा सपना साकार हो गया। 15 जुलाई सन् 2017 के दिन प्रातः 11 बजे मयूर विहार फेस -1 में स्थित उनके आवास में पहुँचकर मैंने घंटी बजायी। कृष्णाजी की सहायिका महिला ने दरवाज़ा खोल दिया। एक बार घूरकर वह पूछने लगी - 'रंजीत जी... है ना?' मैंने सिर हिलाया। टेलिफोन पर मेरे आगमन की सूचना पहले से उन्हें-मिल चुकी थी।

अन्दर की ओर इशारा करके सहायिका जी आगे - आगे चली और मैं पीछे - पीछे। उन्होंने मुझे सोफे पर बिठाया। कृष्णाजी रात - रात भर लिखती हैं और दस - ग्यारह बजे सुबह तक सो जाती हैं। इसलिए कुछ देर मुझे इंतज़ार करना पड़ा। मेरे चिंतन के आकाश में 'ज़िन्दगीनामा', 'मित्रो मारजानी' सहित तमाम रचनाएँ मंड़राने लगी थीं। किसी आहट ने मुझे उक्त स्थिति से मुक्त कर दिया।

हमेशा इंतज़ार का फल मीठा होता है। आखिर शुभ्र परिधान में एक अकर्षक हँसी के साथ वह दिव्य मूर्ति प्रत्यक्ष हुई।

मैं छपा गया...। अपने को संभालते हुए चरणस्पर्श कर उनका आशीर्वाद लिया। बुढ़ापे का करारा प्रहार उन्हें काँटा चुभो रहा था मगर उनका मन प्रदीप्त था। शिष्टाचार से ही मुझे पता चला कि कम उम्र के मुझ जैसे अल्पबुद्धि साहित्यिकों को भी अपना सहयोगी मान लेने की विराट मानसिकता उनमें कूट - कूटकर भरी है।

बातचीत इस बात पर शुरू हुई कि मेरी विधा क्या है? मैंने उत्तर दिया - 'हाइकू'। मुझसे दो - तीन हाइकू सुनने के पश्चात् प्रोत्साहन के स्वर में कहा - "आपकी 'हाइकू' अच्छी हैं... यह लिखना भी बड़ा कठिन है...। आप मुझसे भी अच्छा लिखते हैं... क्योंकि भावों एवं वस्तुताओं को साहित्यिक सूक्ष्म रूप देना उतना आसान नहीं है। आप ज़रूर उसमें पारंगत हैं....।"

मैंने सिर हिलाया। मेरे हृदय में इस तारीफ करने की खुशी की लहरें तरंगायित होना आरंभ कर दिया। तुरन्त ही मेरी बुद्धि में कुछ - कुछ बातें समझ आने

लगीं। मैं समझ गया कि औरों को महत्त्व देने की उनकी यह निजी शैली ही है। वियोगी हरि की उक्तियाँ मुझे सचेत रही थीं - "पंडित को न सम्मान से हर्ष और न अपमान से ताप होता है। वह काम की युक्ति और मनुष्यों से व्यवहार का उपाय जानता है। जो आर्य-जीवन की मर्यादाओं का रक्षक है, जिसकी प्रज्ञा उसके स्वाध्याय के अनुरूप है वही पंड़ित है।" कृष्णाजी में 'पंडिताई' अपने मूर्त रूप में समाहित है। दरमियान उनकी परिचारिका 'दीदी' ने एक गिलास 'मुसम्बी जूस' पकड़ाया। बहुत ही स्वादिष्ट था।

कुछ तो मुझे भी पूछना था। उनसे जुड़े वाद - विवादों पर चर्चा करने की हिम्मत नहीं पड़ी। अचानक 'सोबती-वैद संवाद' पुस्तक का एक संदर्भ मुझे याद आ गया। मैंने प्रश्न किया - "मेमजी 'सोबती-वैद संवाद' में आपने एक बात गलत कही है।"

सहसा उन्होंने कहा - "हाँ... मैं जानती हूँ। उसमें 'ओम जय जगदीश हरे' प्रार्थना गीत के लेखक का नाम गलत लिखा हुआ है.... श्रद्धाराम फिल्लौरी जी का नाम मैं भूल गयी थी।" आपसे पहले किसी और ने इस बात का ज़िक्र किया था... आप दूसरे व्यक्ति हैं। आप जैसे पाठक यदि हो तो क्या गम... लेखक और अच्छे से लिख सकते हैं।"

और भी अनेक बातें हमने कीं। एक घंटा कैसे बीत गया... पता नहीं। वहाँ से निकलने का मन मुझे नहीं था। फिर भी वहाँ से निकलना चाहा। क्योंकि वे अत्यंत व्यस्त थीं... अपने लेखन के प्रति भी और जीवन के प्रति थी।

निकलते - निकलते एक फोटो खींचने की इच्छा मैंने प्रकट की तो उसका समाधान तुरन्त ही उनकी सहायिका जी ने किया।

कृष्णा सोबती जी के साथ एक चित्र! उपहार स्वरूप "बुद्ध का कमण्डल लद्दाख" पुस्तक उन्होंने मुझे भेंट की और एक 'बंडल' पकड़ाकर यों कहा - "लताजी को दे देना"

चरण स्पर्श किया तो उन्होंने अपनी हथेली मेरे सिर पर रखकर आशीर्वाद दिया। बाद में कई दफ़ा मुझे मालूम पड़ा कि उनकी हथेली में अजब अनुभूति का स्वर निहित था। हर दिल्ली प्रवास में उनसे मिलना चाहा... लेकिन हिम्मत नहीं पड़ी। क्योंकि तब तक अस्पताल का चक्कर वे काटने लगी थीं। आखिर 25 जनवरी 2019 को ज्ञानपीठ पुरस्कार विजेता विख्यात् हिन्दी साधिका कृष्णा सोबती का ब्रह्मलीन होने की खबर डॉ.लताजी ने चलभाष पर दी, साथ में एक सन्देश भी, जिसे कृष्णा जी ने लता जी को भेजा था - "सबकुछ छोड़ देना पर मुस्कुराना और उम्मीद कभी न छोड़ना...।"

◆ रविशैलम
कट्टच्चलकुष़ी.पी.ओ
बालरामपुरम, तिरुवनन्तपुरम।
मो : 7247243100

कृष्णा साबती की कहानी "दादी अम्मा" में चित्रित वृद्ध जीवन

♦ डॉ.लक्ष्मी.एस.एस

आधुनिक हिंदी कथा लेखिकाओं में कृष्णा सोबती सबसे चर्चित हैं जिनका अलग व्यक्तित्व रहा है। उनका जन्म 18 फरवरी 1925 को गुजरात में हुआ, अब गुजरात यानी पंजाब का वह हिस्सा पाकिस्तान में है। कृष्णाजी को अपनी ज़िन्दगी में सबसे अधिक लगाव उनकी माताजी दुर्गा सोबती जी से ही रहा। उनकी माँ ज़्यादा पढ़ी-लिखी नहीं थीं ,फिर भी जो संस्कार उन्होंने अपने बच्चों को दिया ,उसका प्रभाव कृष्णा सोबती में देखा जाता है। कृष्णा सोबती जी ने अपनी पढाई-लिखाई लाहौर, दिल्ली और शिमला में की है। कृष्णा जी ने साहित्य-सृजन के साथ-साथ नौकरी भी की । उन्होंने आर्मी अफ्सरों के बच्चों के स्कूल में प्रधान अध्यापिका का पद भी संभाला।

उनकी प्रमुख रचनायें हैं- उपन्यासिका/लम्बी कहानी- 'यारों के यार(1967), 'तिन पहाड़' (1968), 'ऐ लड़की'(1991), 'जैनी मेहरबान सिंह' (2007) आदि। उपन्यास- 'डार से बिछुड़ी'(1958), 'मित्रो मरजानी'(1967), 'सूरजमुखी अँधेरे के' (1972), ज़िन्दगीनामा' (1979), 'दिलोदानिश' (1993), 'समय सरगम'(2000) आदि। संस्मरण- 'हम हशमत1' (1997), 'हम हशमत 2'(1999), 'हम हशमत3' (2012), 'हम हशमत 4'(2014) आदि। साक्षात्कार - 'सोबती-वैद संवाद' (2005), 'मार्फ़त दिल्ली' (2018)आदि। आलोचना - 'मुक्तिबोध: एक व्यक्तित्व सही की तलाश में' (2017), 'लेखक का जनतन्त्र' (2018), आदि।

उनको अनेक पुरस्कार भी मिले हैं। वे 'ज़िंदगीनामा' नामक उपन्यास के लिए 'साहित्य अकादमी पुरस्कार' (1980) और सन् 1981 में 'साहित्यशिरोमणि पुरस्कार' से सम्मानित हुई। सन् 1996 में साहित्य अकादमी फ़ेलोशिप मिला। कृष्णा जी को हिंदी अकादमी, दिल्ली की ओर से वर्ष 2000-2001 के 'शलाका सम्मान' से सम्मानित किया गया। साहित्य के क्षेत्र में उनके उत्कृष्ट योगदान के लिए उन्हें सन् 2017 का 'ज्ञानपीठ पुरस्कार' प्रदान किया गया था। कृष्णाजी का निधन 94 साल की उम्र में 25 जनवरी 2019 को दिल्ली में हुआ।

एक नारी होने के कारण उन्होंने नारी मन को सही ढ़ंग से समझा है। कृष्णा सोबती ने अपनी रचनाओं के माध्यम से सभी पुराने बिम्बों को चुनौती दी है। आज औरत के जीवन में प्रतिदिन बदलाव घटित हो रहा है । स्त्री आर्थिक तौर पर स्वतंत्र होती दिखाई पड़ रही है यह एक अनिवार्य और शुभ संकेत है ,सामाजिक परिवर्तन का स्त्री के ज़िम्मे काम बढा है। अब उसे घर- परिवार संभालकर उसकी सहेज भी करनी है और आर्थिक रूप से स्वतंत्र होने के कारण किये जानेवाले कार्य में भी योगदान देना है। इस चुनौती ने औरत को आत्मविश्वास दिया है। उनके

अनुसार "मैं अपनी ओर से यही कहना चाहूंगी कि स्त्री समाज का आधा हिस्सा है पुरुष से उसका वैर नहीं है, बल्कि उससे निकटतम रिश्ता है,लेकिन पुरुष को यह नहीं भूलना चाहिए कि स्त्री केवल देह नहीं है वह मन भी है और दिमाग भी"।[1]

कृष्णा जी ने अपनी रचनाओं में नारी को केन्द्र बनाकर प्रस्तुत करने की कोशिश की है। स्वाभाविक रूप से नारी के विभिन्न रूप हमारे सामने हैं - बेटी, पत्नी, माँ, दादी आदि। कृष्णा जी की कहानियों में निर्भीकता, खुलापन और भाषागत प्रयोगशीलता साफ तौर पर दिखाई देती हैं। कृष्णा सोबती कृत कहानी-संग्रह 'बादलों के घेरे' का प्रथम संस्करण 1980 तथा द्वीतीय संस्करण 2006 ई में 'राजकमल प्रकाशन' द्वारा हुआ है। कृष्णा सोबती कृत कहानी-संग्रह 'बादलों के घेरे' चौबीस कहानियों का संग्रह है- 'बादलों के घेरे, 'दादी अम्मा, 'भोले बादशाह, 'बहनें, 'बदली बरस गई, 'गुलाबजल गंडेरियाँ, 'कुछ नहीं कोई नहीं, 'टीलो ही टीलो', 'अभी उसी दिन ही तो', 'दोहरी साँझ', 'डरो मत मैं तुम्हारी रक्षा करूँगा', 'जिगरा की बात', 'खम्माघणी अन्नदाता', 'सिक्का बादल गया', 'आज़ादी शम्मोजान की', 'कामदार भीखमलाल', 'पहाड़ों के साये तले', 'न गुल था न चमन था', 'एक दिन', 'कलगी', 'नफीसा', मेरी माँ कहाँ...', 'लामा', 'दो राहे दो बाहें'।

'बादलों के घेरे' कहानी संग्रह की प्रमुख कहानी है 'दादी अम्मा'। 'दादी अम्मा' कहानी में वृद्धावस्था सम्बन्धी नवीन मूल्यों को दर्शाया गया है। वृद्ध जीवन एक ऐसा दौर है जहाँ अकेलापन चारों तरफ से घेर लेता हैं। अपनों की चाह है, वक्त पाने की इच्छा है, फिर भी भीड़ में वृद्ध तन्हा हो जाता है। खुद से भी दूर हो जाता है। हर वक्त एक नाराज़गी चेहरे लिए हुए वह खुद के अकेलापन को दुनिया से छिपाने की कोशिश करता है। वृद्ध जीवन की विवशता के साथ दादी का प्यार भी इस कहानी में लेखिका व्यक्त करती है।

हिंदी कथा जगत में ऐसी अनेक कहानियां हैं जिनमें दादी को प्रमुख कथा पात्र के रूप में लेखकों ने प्रस्तुत किया है। प्रेमचंद की 'ईदगाह' एक क्लासिक कहानी है जिसमें हामिद नामक छोटे लड़के को माता-पिता की मृत्यु होने पर उसकी दादी आमिना पाल-पोसकर बड़ा कर रही है। जैनेद्र की कहानी 'रामू की दादी' दादी और नौकर के सहारे पलनेवाले एक बच्चे की कहानी है। मनमोहन भाटिया की कहानी 'बड़ी दादी', सूर्यबाला की कहानी 'दादी और रिमोट' , नीलाक्षी सिंह की 'ऐसा ही कुछ भी' आदि ऐसी कहानियाँ हैं, जिनमें मुख्य भूमिका दादी निभाती है।

कृष्णा सोबती की कहानी 'दादी अम्मा' का केन्द्र दादी नहीं, बल्कि परदादी है। यह एक ऐसा परिवार है जिसमें चार पीढियाँ रहती हैं। दादी कुछ झग़डालू स्वाभाव की है, और अपने पति (दादा) और बहू से झगड़ती रहती है, लड़ने का कोई मौका हाथ से नहीं छोड़ती। जब बहुओं के कमरों की ओर जाती है, तो लड़-झग़डकर लौट आती है - "और अम्मा तो सचमुच उठते-बैठते बोलती है, झगड़ती है, झुकी कमर पर हाथ रखकर वह चारपाई से उठकर बाहर आती है तो जो सामने हो उस पर बरसाने लगती है।"[2] विवाह के अवसर पर मेहंदी लगाने का रस्म शगुन का लक्षण है। लेकिन दादी के मन में आधुनिक पीढ़ी की रीतियों को देखकर अनेक प्रश्न उमड़ते हैं।- "बहु का श्रृंगार

देख-दादी-अम्मा बीच-बीच में कुछ कहती है, लड़कियों में यह कैसा चलन है आजकल? बहू के हाथों और पैरों में मेहंदी नहीं रचाई। यही तो पहला शगुन है। दादी अम्मा की इस बात को जैसे किसी ने सुना नहीं।"[3] इसमें पाठक देख सकते हैं कि पुराने संस्कारों और रीतियों का पालन दादी चाहती है, लेकिन आधुनिक पीढ़ी इसे सुनने के लिए तैयार नहीं है। फिर बाद में पाठक देख सकते हैं कि दादी के प्रति बेटे-बहुओं और पोते-पोतियों में सम्मान और प्रेम का भाव बचा हुआ है। दादी अम्मा की मृत्यु के बाद परिवारवाले उनका स्नेह, त्याग, निष्कपट प्यार, आत्मसमर्पण की भावना के बारे में सोचते हैं। उनकी मृत्यु से दादा केलिए ही नहीं, बटे-बेटियों, पोते-पोतियों केलिए भी अपूरणीय क्षति हुई। "मौत के बाद रूखी सहमी-सी दुपहर। अनचाहे मन से कुछ खा पीकर घरवाले चुपचाप खाली हो बैठे अम्मा चली गई, पर परिवार भरपूर है। पोते थककर अपने-अपने कमरों में जा लेटे। बहुएँ उठने से पहले सास की आज्ञा पाने को बैठी रही। दादी अम्मा का बेटा निढ़ाल होकर कमरे में जा लेटा।" [4] दादी के जाने के बाद दादा और भी थक गया, भले ही उसे अनेक बीमारियाँ कमज़ोर कर रही थीं, दादी की मृत्यु उसकेलिए एक कठोर आघात बन गया।

संक्षेप में 'दादी अम्मा' कहानी के द्वारा लेखिका ने बूढ़ापे की विवशताओं और कमज़ोरियों का यथार्थ चित्रण करने की कोशिश की है। इस कहानी में संयुक्त परिवार का चित्रण करके उसमें मौजूद पारस्परिक सम्बन्ध की ओर लेखिका ने संकेत दिया है।

इस कहानी में दादी अम्मा परंपरा का पालन करते रहना चाहती है। कृष्णा सोबती ने आधुनिक जन-जीवन का यथातथ्य चित्रण अपनी कथा रचनाओं में किया है। परंपरागत भारतीय संस्कृति का मूल्य जाननेवाली कृष्णा सोबती सदा अच्छाई को स्वीकार करने के पक्ष में हैं। नयी पीढ़ी ऐसी है कि प्राचीनता का महत्व नहीं जानती।

संदर्भ

1.इक्कीसवीं सदी के हिंदी महिला कथा साहित्य में स्त्री विमर्श- डॉ.अंजली चौधरी, पृ. सं. 79

2.दादी अम्मा, बादलों के घेरे -कृष्णा सोबती,पृ.सं. 33

3. वही, पृ.सं. 35

4. वही, पृ.सं. 39

आधार ग्रन्थ

1. बादलों के घेरे, कृष्णा सोबती, राजकमल प्रकाशन, प्रकाशन वर्ष 1980

सहायक ग्रन्थ

1. इक्कीसवीं सदी के हिंदी महिला कथा साहित्य में स्त्री विमर्श डॉ. अंजली चौधरी, श्रीराम प्रकाशन, प्रकाशन वर्ष 2017।

2. कहानियाँ रिश्तों की, संपादक - डॉ. राजकुमार, राजकमल प्रकाशन।

3. मानसरोवर भाग-1, संपादक-डॉ. गुरबचन सिंह, दिल्ली पुस्तक सदन, प्रकाशन वर्ष 2016।

♦ असिस्टेंट प्रोफेसर

हिन्दी विभाग

पी आर एन एस एस कॉलेज

मट्टन्नूर।

फोन - 9400856238

'ऐ लड़की' में मनोविज्ञान

♦ डॉ.धन्या.एल

कुछ दिनों से कृष्णा सोबती जी के बारे में कुछ लिखने की इच्छा मेरी मन में थी। क्योंकि मेरी प्रिय गुरुवर एवं केरल की हिन्दी लेखिका डॉ.पी.लता जी को कृष्णा सोबती से धनिष्ठ संबंध एवं मित्रता थीं। इसलिए गुरुमुँह से मैं ने कृष्णा जी की लेखनी और उनकी रचनाओं पर निरंतर होनेवाले वैविध्य के बारे में सुना है। अब कृष्णा सोबती पर निकाले विशेषांक पर लिखने का अवसर मुझे मिला तो मैं ने विषय चुन लिया 'ऐ लड़की में मनोवैज्ञान'।

श्रीमती कृष्णा सोबती हिन्दी साहित्य में स्त्री-चेतना की प्रखरतम प्रवक्ता है। 18 फरवरी 1925 में जन्मे कृष्णाजी का साहित्यिक जीवन कविता-रचना से शुरू हुआ, कथा लेखन में वे सुविख्यात हुईं तथा समग्र साहित्य-सेवा केलिए सन् 2017 में 53 वाँ ज्ञानपीठ पुरस्कार से विभूषित हुईं। साहित्य अकादमी पुरस्कार जिन्दगीनामा पर (1980), शिरोमणि पुरस्कार (1981), हिन्दी अकादमी पुरस्कार (1982), हिन्दी अकादमी (1996), शालका पुरस्कार (2000-2001)आदि से भी वे सम्मानित हुईं। प्रमुख उपन्यास हैं-डार से बिछुड़ी (1958), मित्रो मरजानी (1966), यारों के यार, तिन पहाड़ (1968), सूरज मुखी अंधेरे के (1972), जिंदगीनामा (1979), ऐ लड़की (1991), दिलो दानिश (1993), समय सरगम(2000) आदि। उनकी निधन 25 जनवरी 2019 को हुआ।

कृष्णा सोबती की कथा रचनाओं में स्त्री-मुक्ति और स्त्री-अस्मिता की स्पष्ट पहचान है।अर्थात उनका कथा साहित्य नारी केंद्रित है। हिंदी कथा भाषा को एक विलक्षण ताज़गी उन्होंने दी है। स्त्री की अस्मिता का सवाल एक मौजूदा सवाल है। कृष्णा साबती के अनुसार' 'भारतीय स्त्री की अस्मिता और व्यक्तित्व की खोज करनेवाले लोग इस कहानी में मूर्तिमान एक ऐसी नारी को पा सकते हैं जो अपने जीवन के अंतिम दिनों में स्त्री जीवन का शास्त्र नैरेट कर देती है।"[1]

'ऐ लड़की' एक सफल और सशक्त उपन्यास है जो कालातीत है। कृष्णाजी ने इसमें अपने लेखन के माध्यम से नयी मूल्य व्यवस्था का निर्माण करना चाहती है। इस उपन्यास में लेखिका पुरुषों की स्त्री पर वर्चस्व रखने की प्रवृत्ति दिखा देती है। लेखिका आज की नारी को गृहस्थी के खूँटे से नहीं बाँधना चाहती है, क्योंकि उसका अपना स्वतंत्र व्यक्तित्व है। कृष्णाजी के चरित्रांकन की कुशलता यह है कि वह निरपेक्ष में रखकर पात्रांकन नहीं करतीं बल्कि पात्र स्वयं अपने संपूर्ण रूप में पाठकों के समक्ष उपस्थित हो जाते हैं।

'ऐ लड़की' उपन्यास की कथा माँ और उनकी लड़की के विषय में है। इसमें माँ और लड़की दो मुख्य पात्र हैं। माँ और लड़की एक दूसरे से काफी भिन्न

हैं।लेकिन दोनों एक दूसरे के मन की भाषा समझती हैं। प्रत्येक रचना में कृष्णा जी ने चुनौती पूर्ण विषय को लिया है।यह कथा निर्भय जिजीविषा का महाकाव्य है। इसमें स्त्री की स्वातंत्र छवि से साक्षात्कार होता है। इसमें कूल्हे की हड्डी टूट जाने के कारण असाध्य रोग से मरणासन्न वृद्ध माँ(अम्मू) और उनकी सेवा करनेवाली उनकी अविवाहित लड़की (चित्रा) के बीच के वार्तालाप के ज़रिए स्त्री संबंधी सामाजिक आचरण पर सवाल उठाए गए हैं। लड़की समाज की युवा लड़कियों का प्रतिनिधित्व कर रही है। पारिवारिक एवं सामाजिक प्रेम, सौहार्द तथा संबंधों की आत्मीयता की दार्शनिक व्याख्या इसमें है। बेटी पैदा होने की और मातृत्व भावना आदि का विषय भी इसमें है। अम्मू कहती हैं 'बेटी के पैदा होते ही माँ सदाजीवी हो जाती है। वह कभी नहीं मरती। वह आज है, कल भी रहेगी। माँ से बेटी तक, बेटी से उसकी बेटी तक, उसकी बेटी से भी अगली बेटी तक।"[2] अम्मू लड़की को समझाना चाहती है कि "भारतीय संस्कारों ने प्रारंभ से ही नारी जीवन की सार्थकता माँ के रूप में मानी है। माँ बनना भारतीय नारी की सर्वश्रेष्ठ उपलब्धि है। अम्मू मानती है कि बच्चा गोद में हो तो तीनों लोकों का सुख माँ के पास होता है। लेकिन लड़की इस बात को स्वीकार नहीं करती। लड़की को व्यक्तिगत स्वतंत्रता ही सबसे बड़ा सुख है। वह जीवन का सुख किताबों में तलाशती है। माँ कहती है इस चमत्कार का तुम्हें क्या पता! इसकी जानकारी किताबों में नहीं मिलती। दीवारों को देखते चले जाने से उन पर तस्वीरें नहीं खींचतीं!"[3]

कृष्णा सोबती की स्त्री पितृक मूल्यों को चुनौती देती है और अपने अस्तित्व को मानवीय रूप स्थापित करती है। सोबतीजी की स्त्री, पुरुष विरोधी नहीं है, बल्कि पितृसत्तात्मक मूल्यों को तोड़ने की क्षमता रखती है। अपने जीवन के निर्णय खुद लेने की स्थिति में वह पहुँच गई है। लड़की (चित्रा) अपनी स्वतंत्रता को स्वयं के व्यक्तित्व का सबसे अनिवार्य तत्व मानती हुई अपनी अस्मिता की अलग पहचान बनाए रखने में प्रयासरत दिखाई पड़ती है। लेखिका की असली महत्ता नारी अस्मिता से संबंधित सवालों की विशिष्ट शैली से जूझने की उस शक्ति में है। उसमें समाज का मंगलदायक भविष्य भी छिपा है। उन्होंने अपने लेखन द्वारा स्त्री की प्रचलित छवि को तोड़कर एक नई दृष्टि से स्त्री को पुर्नस्थापित करने का प्रयास किया है। अम्मू तो मृत्यु को जीवन का हिस्सा मानती हैं। मृत्यु को स्वीकारने का तात्पर्य यह नहीं है कि अम्मू को जीवन से कम लगाव है। उन्होंने भरपूर जीवन जिया है, गृहस्थी, परिवार, विवाह, संतानों का सुख सबकुछ उन्होंने देखा है। वे कहती हैं "लड़की यह दुनिया बड़ी सुहानी है। लड़की माँ का हाथ छूती है। हवाएं, धूप, छांह, बारिश, उजाला, अंधेरा, चांद, सितारे इस लोक की तो लीला ही अनोखी है। अद्‌भुत!"[4]

लड़की (चित्रा) स्वतंत्र अस्तित्व के साथ स्थिर रहना चाहती है। इसके लिए आर्थिक स्वतंत्रता अत्यधिक महत्वपूर्ण है। लड़की यौवन की दहलीज़ पार कर चुकी है किन्तु विवाह करना नहीं चाहती। व्यक्तिवादी विचारोंवाली लड़की आधुनिक मानसिकता के प्रभावस्वरूप अपनी अलग कल्पना लोक में विचरण करती है। अम्मू अपनी लड़की को विवाह की सलाह देती है। लेकिन वे उन नारियों में हैं, जो परंपरागत विवाह को महत्व नहीं देती है। अम्मू की चिंता है कि "उसकी मृत्यु के बाद

आवश्यकता पड़ने पर लड़की किसको आवाज़ देगी? कौन उसकी मदद करेगा?[5] मगर आधुनिक मानसिकतावाली लड़की का कहना है मैं किसी को नहीं पुकारती। जो मुझे आवाज़ देगा, मैं उसे जवाब दूँगी।[6] वह किसी को आवाज़ नहीं देगी। वह विवाह जैसी परंपरा को नकारती है। लड़की उन्मुक्त और स्वतंत्र जीवन जीना चाहती है। उसने खुद जीवन भर अकेली रहने का निश्चय किया है। वह आधुनिक कामकाजी कमाऊ नारी की प्रतिनिधि है। लड़की विवाह के बंधन में पड़कर अपने आप को दूसरों के हवाले करना नहीं चाहती। वह आत्म सजगता की अधिकता की वजह से एक प्रकार की जड़ता में फंसती जाती है।

कृष्णा सोबती ऐसे परिवार के महत्व को नकारती नहीं, जहाँ रिश्तों में प्यार की गरमाहट हो, एक दूसरे के प्रति आदर हो। केवल नाम केलिए रिश्तों को निभाने के पक्ष में वे कतई नहीं हैं। इसकी अपेक्षा अकेले रहना वे अधिक पसंद करती हैं। यही विचार लेखिका ने लड़की के माध्यम से यहाँ व्यक्त किया है। अम्मू जीवन की कटुता और मधुरता दोनों से संपन्न अपने अनुभव लड़की को देना चाहती हैं जिससे अपना जीवन खुशहाल बना सके। लेकिन लड़की आधुनिक मानसिकता और गहरी सजगता के कारण जीवन की वास्तविकता को नकारती है और अम्मू पर खीज उठती है।

माँ और लड़की दोनों ही नारी मुक्ति की पक्षधर हैं। पर दोनों के दृष्टिकोण भिन्न हैं। लड़की पुरुष निरपेक्ष नारी स्वतंत्रता चाहती है। उसने एक नई यथार्थपरक, वैज्ञानिक जीवन-दृष्टि अर्जित कर ली है। लड़की में अपनी स्वतंत्रता, आत्म गौरव व अस्तित्व के प्रति छटपटाहट अधिक है। लड़की में नारी मुक्ति की चाह वैचारिकता के साथ-साथ लौकिक धरातल पर है, जो नारी स्वतंत्रता के विकास को दर्शाती है। लड़की पुरानी और परंपरागत नारी की पीड़ाओं का अहसास अपने अंदर समेटती है। लेकिन यह नहीं चाहती कि उन जैसे बने। वह अपने माँ की तन-मन से सेवा करती है। उसकी डाँट-फटकार भी सुनती है। पर अपने व्यक्तित्व का निर्माण स्वयं करना चाहती है। माँ बेटी एक दूसरे के मन की भाषा समझती है। लेकिन दोनों की मानसिकता, संवेदना और संस्कारों में गुणात्मक अंतर हैं।

'ऐ लड़की' नारी जीवन की महागाथा है। यह समग्र नारी जीवन पर केंद्रित उपन्यास है। लड़की का पात्र एक लय में चलता है। लेखिका ने लड़की के चरित्र को जीवंत और सशक्त बनाने के साथ कथावस्तु को भी अनन्य बनाया है। कृष्णा जी के उपन्यासों की स्त्री उन्मुक्त विचारोंवाली लिबरेटड नारी है। निष्कर्ष रूप में कहा जा सकता है कि 'ऐ लड़की' की लड़की केवल देह की तृप्ति में ही स्वयं की अस्मिता को नहीं तलाशती है, बल्कि देह से परे हटकर, खुरदरे यथार्थ जगत के घात-प्रतिघातों को झेलनेवाली, सशक्त व्यक्तिवादी नारी तक उनकी तलाश पहुँच जाती है। ज़िन्दगी की ज़्यादतियों के विरुद्ध अकेले खड़े होने का साहस इस परिपक्व, समझदार तथा बहादुर स्त्री में है।

हिंदी साहित्य को नया मोड़ और नई दृष्टि देने में कृष्णा जी ने जो कुछ भी किया है, वह सराहनीय है। इनके लेखन में नारी मुक्ति के लिए जिस चेतना का विकास हो रहा था वह नारी समाज के लिए रामबाण जैसा है। 'ऐ लड़की' हिन्दी जगत में अपनी अलग और विशिष्ट पहचान रखनेवाली रचना है। विषय की एकांगिता,

सघन संवेदनात्मकता तथा सूक्ष्म सांकेतिक अभिव्यंजना शैली के कारण यह श्रेष्ठ लघु उपन्यास है।

संदर्भ

1. समकालीन महिला उपन्यासकारों के उपन्यासों में नारी विमर्श, डॉ मुक्तात्यागी, अमन प्रकाशन, कानपुर, पृ.सं. 46
2. 'ऐ लड़की', कृष्णा सोबती, राजकमल पेपर बैंकर्स, नई दिल्ली, पृ.सं. 43
3. वही, पृ. सं. 11
4. वही, पृ. सं. 41
5. वही, पृ. सं. 49
6. वही, पृ. सं. 49

आधार ग्रंथ

1. 'ऐ लड़की', कृष्णा सोबती, राजकमल पेपर बैंकर्स, नई दिल्ली, पृ.सं. 43

♦ असिस्टेंट प्रोफेसर (हिन्दी)
के एस एम डी बाी कॉलेज
शास्तांकोट्टा, कोल्लम।
फोन- 9747053497

सही उत्तर चुनें

(पृ.सं.19 के आगे)

11.कृष्णा सोबती का पहला प्रकाशित उपन्यास कौन-सा है?

(अ) मित्रो मरजानी

(आ) डार से बिछड़ी

(इ) चन्ना

(ई) सूरजमुखी अंधेरे के

12.कृष्णा सोबती का पहला लिखित उपन्यास कौन-सा है?

(अ) डार से बिछुड़ी

(आ) लामा

(इ) चन्ना

(ई) दिलो दानिश

13.मृत्युशय्या में पड़ी बूढ़ी माँ की जिजीविषा किस उपन्यास में चित्रित है?

(अ) मित्रो मरजानी

(आ) डार से बिछड़ी

(इ) ऐ लड़की

(ई) सूरजमुखी अंधेरे के

14.कृष्णा सोबती को ज्ञानपीठ पुरस्कार कब प्राप्त हुआ?

(अ) सन् 2016

(आ) सन् 2017

(इ) सन् 2018

(ई) सन् 2019

15.ज्ञानपीठ से पुरस्कृत महिलाओं में कृष्णा सोबती का स्थान कितना है?

(अ) सातवाँ

(आ) प्रथम

(इ) पाँचवाँ

(ई) आठवाँ

(शेष पृ.सं. 40)

मानवीय संबन्धों में मूल्य ह्रासः 'सिक्का बदल गया' कहानी के विशेष संदर्भ में

♦ विजयलक्ष्मी.एल

विभिन्न साहित्यिक विधाओं में कहानी का पृथक स्थान है। चूँकि कहानी जीवन के अंतस्थल तक पहुँचकर जीवन की वास्तविकताओं का अवलोकन करता है। अतः कहानीकारों की सामाजिक सरोकार अन्य विधाओं से अपेक्षाकृत तीव्रतम रहता है। पचास के बाद के कहानी साहित्य ने युगीन परिवर्तनों को आत्मसात करते हुए अत्यंत तटस्थता के साथ तत्कालीन परिवेश के जन-जीवन का चित्र उपस्थित किया है। लेखकों के अलावा लेखिकाओं ने भी कहानी के क्षेत्र में कथा की आत्मा व कलेवर को नई भावभूमि प्रदान की। परंपराबद्ध मान्यताओं के दायरे से स्त्री को मुक्ति दिलवाकर नारी-चेतना जागृत करना ही लेखिकाओं का बुनियादी लक्ष्य रहा है। यही नहीं, समाज और व्यक्ति के द्वन्द्वात्मक स्थिति को भी इन लेखिकाओं ने उकेरा है। इस दौर की लेखिकाओं में जीवन की सच्चाईयों को निर्भीकता के साथ प्रस्तुत करनेवाली 'बोल्ड' लेखिका होने का श्रेय कृष्णा सोबती को प्राप्त है।

उपन्यासों के भाँति ही कहानियों में भी उन्होंने सामाजिक समस्याओं, खासकर नारी की समस्याओं को उकेरा है। कृष्णा साबती की कहानियों का संकलन है 'बादलों के घेरे'। कृष्णा साबती ने सामाजिक जीवन के विविध संदर्भों को अपनी कहानियों का विषय बनाया है। भारतीय इतिहास में स्वतंत्रता-संग्राम का त्रासद अंत था देश विभाजन। देश-विभाजन को आधार बनाकर लिखी गयी कृष्णा सोबती की कहानियों में सबसे चर्चित कहानी है सन् 1948 में प्रकाशित 'सिक्का बदल गया'। विवेच्य कहानी में एक विधवा नारी की विवशता एवं पराधीनता को देश विभाजन की पृष्ठभूमि में पेश किया गया है।

भारत-पाक विभाजन के दुष्परिणामों को सर्वाधिक औरतों को भोगना पड़ा है। साम्प्रदायिकता से उपजी अमानवीयता व घृणा ने औरतों की ज़िन्दगी की राह को अंधकारमय बना दिया। हिंदू-मुस्लिम धर्मों के अंर्तद्वन्द्व के कारण परिवार एवं समाज में हुए धार्मिक व नैतिक पतन से मानवीयता का लोप हुआ। तत्पश्चात व्यक्ति के सामाजिक संबन्धों पर मूल्यहीनता का प्रभाव पड़ा। शिष्टाचार ने भ्रष्टाचार की राह पकड़ ली।

मानवीय मूल्य का स्रोत मानव है। डॉ.धर्मवीर भारती के शब्दों में - "जब हम मानव मूल्य की बात करते हैं तो हमारा तात्पर्य क्या है, यह समझ लेना आवश्यक है। अपनी

परिस्थितियाँ, इतिहास क्रम और काल-प्रवाह के संदर्भ में मनुष्य की स्थिति क्या है और महत्व क्या है- वास्तविक समस्या इस बिन्दु से उठती है।" (मूल्य और मूल्य संक्रमण, डॉ.विनीता राय, पृ.सं.11)। सामाजिक जीवन के उलट-फेर से मूल्य भी परिवर्तनशील रहता है। संस्कृति से सीधा संबन्ध रखने के कारण मूल्य संक्रमण संस्कृति को विकृत बनाता है। इस प्रकार विकृत संस्कृति से देश, समाज एवं व्यक्तियों पर मूल्यध्वंस के विविध आयाम दृष्टिगोचर होते हैं। अपने धर्म की स्थापना के लिए दो धर्मों के बीच की साम्प्रदायिक कट्टरता एवं दंगों ने भारतीय समाज के जीवन मूल्यों को धूल में मिला दिया। मनुष्यता व प्रेम की जगह लोग एक दूसरे के खून के प्यासी निकले। भारतीय समाज में बँटवारे की स्थिति से सामाजिक परिवेश में हुई तबाही को बड़े बेबाक ढंग से कृष्णा सोबती ने अपनी रचनाओं में पेश किया है।

'सिक्का बदल गया' विधवा शाहनी की व्यथा कथा है, जो विभाजन की साम्प्रदायिक विभीषिका से यातनाग्रस्त व्यक्ति जीवन का प्रतिनिधित्व करनेवाली है। बड़ी हवेली, मीलों फैले खेत, हवेली की अंधेरी कोठरी में सोने-चांदी की संदूकचियाँ आदि उसके पति शाहजी की संपत्ति हैं। बिना भेद-भाव से बहुतेरे लोग शाहजी के वहाँ काम करते थे। शाहजी की मृत्यु के बाद सब जायदाद की मालिकन शाहनी बन गयी। मगर विभाजन ने सब तितर-बितर कर दिया। हिन्दू-मुसलमानों के बीच खाई बढ़ गयी। हिन्दू परिवारों को दूसरे स्थान ले गये। जाने के पहले शाहनी अपनी हवेली का अंतिम दर्शन करना चाहा। लेकिन अकेली वहाँ जाने की हिम्मत उसमें नहीं थी। इसलिए वह रोश के घर जाती है जो पहले शाहजी का सेवक था और उसकी माँ की मृत्यु के बाद शाहनी के यही पलकर बड़ा हुआ था। शेरा शाहनी से झूठे स्नेह का प्रदर्शन करता है और जल्दी वहाँ से निकलने की प्रेरणा देता है। बँटवारा हो जाने के कारण शेरा को शाहनी के साथ चलना भी अनुचित लगता है। शाहनी की हवेली को लूटने के लिए पूरा गाँव खड़ा था। शेरा भी उस हवेली की सोने-चांदी की संदूकचियाँ उठाने की तैयारी कर चुका था। भय, विस्थापन, खंडित मन असहाय और अवहेलन की जलन से शाहनी का मन तडपा रहा था। एक ज़माना था कि वह उस हवेली की मालकिन बनकर रही थी। जो लोग उसके सेवक बनकर रहे थे आज वे लोग उससे नज़र मिलाने के लिए भी तैयार नहीं। खाली मन, खाली हाथ, उसे वहाँ से निकलनी पड़ी। बिदा करते वक्त शेरा ने शाहनी से अपनी निस्सहायता का बयान करता है कि "राज पलट गया है, सिक्का बदल गया है।"

अब वह अपने परिवेश से उखड़कर नए स्थान और नए लोगों के बीच पहुँच गयी है। नए जीवन से संपर्क स्थापित करना उसके लिए संघर्ष की चुनौती है। बँटवारे की स्थिति ने शोषक को शोषित और शोषित को शोषक बना दिया। वक्त के बदलने के साथ-साथ लोगों के मानसिक व्यापार में

भी बदलाव आया। शेरा जैसे व्यक्ति शाहनी की कृपा-कटाक्ष से जीवन बिता रहे थे। परंतु कहानी के द्वारा यह तथ्य स्पष्ट निकलता है कि केवल देश का नहीं, बल्कि व्यक्तियों के मन का भी बँटवारा हो चुका है।

कृष्णा सोबती ने विवेच्य कहानी के द्वारा बंटवारे के कारण मानव-मूल्यों के सिक्के के बदल जाने और संबन्धों के निरर्थक बना दिये जाने से उत्पन्न मानसिक द्वन्द्व को एक सामान्य चरित्र के ज़रिए सहज-मार्मिक ढंग से पेश किया है। विभाजन के कटु सत्य को उकेरनेवाली यह कहानी बहुचर्चित है तथा हिन्दी कहानी साहित्य की एक विशिष्टतम उपलब्धि है।

आधार ग्रंथ

1. सिक्का बदल गया , बादलों के घेरे, कृष्णा सोबती, राजकमल प्रकाशन, 2007।

सहायक ग्रन्थ

1. साम्प्रदायिकता के स्रोत, अभय कुमार दुबे (संपादक), विनय प्रकाशन,1993।

2. मूल्य और मूल्य संक्रमण, डॉ.विनीता रॉय, कौशिक प्रकाशन, 2002।

◆ शोध छात्रा
यूनिवर्सिटी कालिज
तिरुवनन्तपुरम
फोन- 9061036390।

सही उत्तर चुनें

(पृ.सं.37 के आगे)

16.कृष्णा सोबती की ज़िन्दगी के अप्रकाशित अंशों का अंकन किस रचना में मिलता है?

(अ) सोबती एक सोहबत

(आ) हम हशमत

(इ) ज़िन्दगीनामा

17.'भारतीय उच्च अध्ययन संस्थान, शिमला' केलिए कृष्णा सोबती द्वारा समय - समय पर लिखी पाठ्य सामग्रियों के संकलन का नाम क्या है?

(अ) दिलो दानिश

(आ) ज़िन्दारुख

(इ) शब्दों के आलोक में

(ई) दादी अम्मा

18.'सूरजमुखी अंधेरे के' का अंग्रेज़ी अनुवादक कौन है?

(अ) कविता नागपाल

(आ) शिवनाथ

(इ) बीबा सोबती

(ई) विमलेश

सही उत्तरः

(1) इ	(6) ई	(11) आ	(16) अ
(2) अ	(7) आ	(12) इ	(17) इ
(3) ई	(8) अ	(13) इ	(18) अ
(4) आ	(9) आ	(14) आ	
(5) ई	(10) ई	(15) ई	

ज़िंदगीनामा : एक परिचय

♦ डॉ.सौम्या वी.एम

हिंदी की विख्यात कथा लेखिका श्रीमती कृष्णा सोबतीजी का जन्म गुजरात में हुआ। शिक्षा उन्होंने दिल्ली, शिमला और लाहौर से प्राप्त की। अभिव्यक्ति के बेलौसपन ने उन्हें बहुचर्चित बना दिया है। उनके प्रसिद्ध कहानी संग्रह हैं बादलों के घेरे, यारों के यार, तिन पहाड़। प्रसिद्ध उपन्यास 'डार से बिछुड़ी', 'सूरजमुखी अंधेरे के', 'मित्रा मरजानी' तथा 'ज़िंदगीनामा' हैं। 'ज़िंदगीनामा' पर सन् 1980 को साहित्य अकादमी पुरस्कार तथा शिरोमणि पुरस्कार मिल चुके हैं। सन् 2017 में उन्हें ज्ञानपीठ पुरस्कार भी मिला।

कृष्णा जी रूमानियत से अधिक आधुनिकता तथा आत्मिकता से आधिक शारीरिकता को अपनी रचनाओं में प्रमुखता दी है। व्यंग्य और आक्रोश का चित्रण उनकी विशेषता है।

'जिंदगीनामा' उनके पहलेवाले उपन्यासों में एक है। इसे आँचलिक उपन्यास के तौर पर रखा जा सकता है। इसमें पात्रों की प्रमुखता से अधिक पंजाब देश की विशेषताओं को ही चित्रित किया गया है। उपन्यास में पंजाब का एक गाँव है। आदमी और आदमी के बीच फर्क डालनेवाले कानून और ऐसे ही तमाम यथार्थ से गुज़रती हुई यह कहानी भारतीय जीवन-दर्शन को उसकी समग्रता में सहेजते-समझते हुए बढ़ती है।

इसमें पंजाब के किसानों-ग्रामीणों के जीवन का चित्रण है। सचमुच ज़िंदगी का पर्याय है ज़िंदगीनामा। पांजाब का जीवन, वहाँ की लोकसंस्कृति और इतिहास की परतों से उभरा है ज़िंदगीनामा। इसे एक ज़िंदारुख कहा गया है। इसे पंजाब की बोलीबानी देकर पात्रों को भाषा के ज़रिए अधिक विश्वसनीय बना दिया है।

'ज़िंदगीनामा' के आरंभ में अट्ठाईस पृष्ठों में एक गद्य गीत है। इसके तुरंत बाद शरद पुष्या की रात का दृश्य पाठक के सामने आ जाता है। कहानी का सूत्र वाक्य है रुख वही रहतो है, रखवाले बदलते रहते हैं।

शाहजी और उनका परिवार जैसे पिंड गाँव का केन्द्रबिंदु है। खोज खबर तो शाहों के पास है, सलाह मशविरा तो शाहों के पात्र, जीवियों के हिसाब-किताब, धन-दौलत जो भी खंदे को चाहिए, वह सब कुछ इनके पास है। एक ओर शाहजी किसान के रक्षक, संरक्षक और सेवक की छवि लेकर उभरते हैं, दूसरी ओर सूदखोर तथा शोषक के प्रतीक हैं ।

उमंग और हुलास से भरे जनजीवन में उदासी है, खून, खतरा और जोखिम हैं तो खतरे से खेलती निड़रता भी भरपूर है। ससुराल की दहलीज लाँघकर प्रेमी के साथ आनेवाली चाची महरी, मायके की बर्बादी का कारण बन जानेवाली बरकती, कंजरी के पीछे सौदाई हुआ माँबीबी का घरवाला, सैयदजादे के प्रेम में जान देने को उतावली विधवा लखमी, प्यार में कामयाब फतह और शाहजी के प्रेम में तपी शबिया ऐसे ही पात्र कथाखंडों को बुनते गए हैं। उनकी यह कृति लोकजीवन का बिछावन बिछ-बिछाकर पूरी बाजी खेलने से पहले ही

पाठक को भटका देती है। पता ही नहीं चलता कि कब कहाँ से फिल्म शुरू हो गई और कब दृश्य बदल गया।

♦ हिंदी अध्यापिका,
चिन्मया विद्यालय,
नरुवामूट्ट, तिरुवनन्तपुरम।
फोन - 9747148928

श्रद्धांजलि : हिमांशु जोशी

हिन्दी के विख्यात रचनाकार हिमांशु जोशी का 22 नवंबर 2018 को सुबह 8.00 बजे दिल्ली में स्थित आवास पर देहांत हुआ। जोशी जी ऐसे रचनाकार थे, जिन्होंने वैविध्यपूर्ण कालजयी रचनाएँ कीं। वे सरल, सौम्य, विन्म्र तथा मृदुभाषी थे। उनका जन्म उत्तराखंड़ के चंपावत जिले के जोस्यूड़ा गाँव में एक कुलीन ब्राह्मण परिवार में 4 मई 1935 को हुआ। सन् 1955 में काम की तलाश में दिल्ली आये। हिन्दी कथाकार जैनेन्द्रकुमार ने उनकी प्रथम कहानी 'दीप तो बुझ गया' पढ़ी तो उनकी साहित्यिक प्रतिभा से अवगत होकर उन्हें हिन्दी साहित्य - रचना के क्षेत्र में कार्यरत होने की सलाह दी। उनका साहित्यिक व्यक्तित्व बहुआयामी है। उन्होंने उपन्यास , कहानी, कविता, नाटक, यात्रावृत्त, संस्मरण, बाल साहित्य जैसी विधाओं में तूलिका चलाई। उनके उपन्यास हैं - 'अरण्य, महासागर, छाया मत छूना मन, कगार की आग, समय साक्षी है तुम्हारेलिए, सुराज आदि। 18 कहानी संग्रह (करीब 200 कहानियाँ) प्रकाशित हैं। अग्नि संभव, नील नदी का वृक्ष, एक आखर की कविता आदि कविता संकलन हैं। प्रकाशित यात्रावृत्त हैं - नार्वे: सूरज चमके आधी रात, उत्तर पर्व, यात्राएँ आदि। अमर शहीद अशफाक उल्लाखाँ, 'समय की शिला पर', 'कगार की आग' आदि रेडियो रूपक हैं। 'यातना शिबिर में', 'भारत रत्न पंडित गोविंद वल्लभ पंत' आदि जीवनियाँ हैं। बाल कहानियाँ और बाल उपन्यास भी लिखे।

पत्रकारिता में जोशीजी रुचि रखते थे। 1968 - 1993 काल में 'साप्ताहिक हिन्दुस्तान' में सहायक संपादक रहे। 'शांति दूत' नामक एक अंतर्राष्ट्रीय पत्रिका का भी संपादन किया।

हिमंशु जोशी के 'कगार की आग' उपन्यास में पिछड़े, तिरस्कृत वर्ग का जीवन - चित्रण है। यह उत्तरखंड़ के पर्वतीय अंचल की जनता की जीवन-गाथा है। यह उपन्यास अंग्रेज़ी, चीनी, नेपाली, चेक, जापानी, इटालियन, बर्मी सहित 20 विदेशी भाषाओं तथा प्रायः सभी भारतीय भाषाओं में अनूदित हुआ है। तुम्हारेलिए रोमांटिक उपन्यास है। यह प्रेम कथा पर आधारित सामाजिक संघर्ष की कथा है। दूरदर्शन में इसका धारावाहिक प्रसारण हुआ है। 'सूरज' गाँधीवादी उपन्यास है। इस पर फिल्म बनी है, जिसका अंतर्राष्ट्रीय फिल्म समारोह में भी प्रदर्शन किया गया था। 'कगार की आग' और 'छाया मत छूना मन' उपन्यासों को 'साप्ताहिक हिन्दुस्तान' में धारावाहिक प्रकाशित करके संपादक मनोहरश्याम जोशी ने उनकी साहित्यिक प्रतिभा का तथा उन्हें 'साप्ताहिक हिन्दुस्तान' का सहायक संपादक रखकर पत्रकारिता में उनकी विशेष निपुणता का परिचय लाखों पाठकों को दिया। जोशीजी की रचनाओं पर कॉलेजों-विश्वविद्यालयों में पी एच.डी का शोध कार्य किया गया है।

शिवनाथनी : अनुपम व्यक्तित्व

♦ डॉ.पी.लता

साठोत्तर हिन्दी कथा-लेखिका श्रीमती कृष्णा सोबती को हिन्दी दुनिया जानती है। किन्तु कृष्णाजी के आराधकों में कम व्यक्ति ही यह जानते होंगे कि उनके जीवन संगी स्वर्गीय श्री.शिवनाथ भी बड़े प्रतिभावन लेखक थे।

कृष्णाजी तथा शिवनाथजी का शान्तिपूर्ण, संतुष्ट और प्रसन्न जीवन प्रत्यक्ष देखने का सौभाग्य मुझे प्राप्त हुआ तो ऐसा महसूस हुआ कि पाण्डित्य में, क्षमता में तथा लेखन-कार्य में वे एक दूसरे के बराबर हैं। मैं दिल्ली में 'मयूर विहार' के घर में आधुनिक, आंचलिक, अनेकों पुरस्कारों से अनुग्रहीत तथा युवा-पीढ़ी की प्रिय हिन्दी कथा - लेखिका श्रीमती कृष्णा सोबती से मिलने गयी तो वहाँ एक प्रकाण्ड पंण्डित, बहुभाषाविद्, विख्यात डोगरी साहित्यकार तथा 'केन्द्र साहित्य अकादमी पुरस्कार' से सम्मानित शिवनाथजी का भी दर्शन हुआ। वहाँ पहुँचने तक सचमुच मुझे यह मालूम नहीं था कि कृष्णाजी के जीवन संगी श्री शिवनाथ इतने सक्षम तथा व्यक्तित्व संपन्न हैं। उनका सही परिचय पाने के बाद मैंने सोचा कि शिवनाथजी की पहचान के बिना हिन्दी दुनिया को कृष्णाजी का परिचय अधूरा रह जायेगा।

हमारे करीब दो घंटे की मुलाकात में मुझसे साहित्यिक विषयों के बारे में तथा मेरे पति से इंजीनियरी, खासकर विद्युत इंजीनियरी के बारे में उनके अविच्छिन्न बोलने की रीत देखकर मुझे ऐसा लगा कि कोई भी विषय उनसे अछूता नहीं है। हमारी बातचीत में उन्होंने पहले कभी यह नहीं बताया कि वे आई.ए.एस हैं। जब मैं ने उनकी व्यक्तिगत बातों के बारे में ज़्यादा जानने की जिज्ञासा प्रकट की तब कृष्णाजी कमरे में जाकर उनकी रचनायें लेकर आयीं। मैं ने उन पुस्तकों के 'लेखक परिचय' पर सरसरी दृष्टि डाली तो यह जानकर बिलकुल अचंभित हुई कि वह अहंहीन सहज व्यक्तित्व आइ.ए.एस., आइ.पी.एस. है, केन्द्रीय सरकार के सचिव के पद से सेवा - निवृत्त हैं तथा 'केन्द्र साहित्य अकादमी पुरस्कार' से सम्मानित हैं। आइ.ए.एस, आइ.पी.एस संवर्ग में 1989 में चुने गये, किन्तु कुछ विशेष कारणों से उपाधि के योग्य पद में प्रविष्ट नहीं हुए। बाद में डाक विभाग में उप महानिदेशक नियुक्त हुए, इसी विभाग से सेवानिवृत्त भी हुए। वे केन्द्रीय सरकार के पदेन अपर सचिव भी थे।

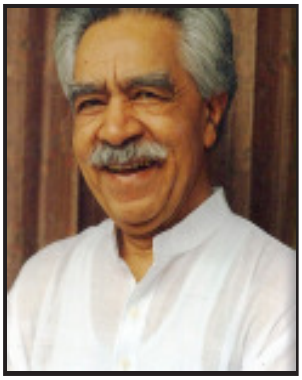

श्री.शिवनाथ

श्री.शिवनाथ का जन्म सन् 1925 में जम्मु में हुआ। वे बहुभाषा पण्डित हैं। डोगरी, अंग्रेज़ी, हिन्दी, काश्मीरी, उर्दू आदि भाषाएँ जानते हैं। अंग्रेज़ी में एम.ए. की उपाधि प्राप्त हैं। उनकी अंग्रेज़ी भाषा-शैली अनुपम और आकर्षक है। उनका व्यक्तित्व किसी को

भी प्रभावित करनेवाला है। ऊँचे कद का गोरा आदमी, सदा हंसमुख तथा शांत हैं।

डोगरी साहित्य को शिवनाथजी की देन ने राष्ट्रीय स्तर पर उन्हें उन्नत कर दिया है। अंग्रेज़ी तथा हिन्दी में उनकी रचनाएँ अनेक पत्रिकाओं में प्रकाशित हुई हैं, जैसे - 'काश्मीर अफ़येर्स', 'कल्चरल फ़ोरम', 'क्वस्ट इंडियन राइटिंग टुड़े', 'द काश्मीर टाइम्स', 'द हिन्दुस्तान टाइम्स', 'इंडियन लिटरेचर एण्ड इंडियन होराइसन्स' आदि।

शिवनाथजी 'केन्द्र साहित्य अकादमी' के डोगरी अनुभाग के प्रमुख लेखक हैं। 'केन्द्र साहित्य अकादमी' के प्रतिष्ठापूर्ण लेखनों - 'एनसाइक्लोपीड़िया ऑफ़ इंडियन लिटरेचर'- छः भाग (Encyclopaedia of India Literature- 6 Volumes), 'ए हिस्टरी ऑफ़ इंडियन लिटरेचर' (A history of Indian Literature), 'आन्तोलजी ऑफ़ मोडर्न इंडियन लिटरेचर' (Anthology of Modern Indian Literature) आदि के डोगरी खंड़ उन्होंने लिखे हैं। इनमें 'ए हिस्टरी ऑफ़ इंडियन लिटरेचर' के दो भाग (सन् 1800 और 1910) निकले हैं और संपादक हैं श्री.एस.के.दास। 'आन्तोलजी ऑफ़ माड़र्न इंडिया' का एक भाग (सन् 1910 सन् 1959) ही निकला है, जिसके संपादक श्री. के.एम.जोर्ज हैं।

डोगरी तथा अंग्रेज़ी भाषाओं में शिवनाथजी की बीस से अधिक रचनायें पुस्तकाकार में प्रकाशित हुई हैं, जैसे - 'ए हिस्टरी ऑफ़ इंडियन लिटरेचर', 'टू डेकेड्स ऑफ़ डोगरी लिटरेचर' (Two decades of Dogri Literature), 'चर्मिंग ऑफ़ द सिटी' (अनुवादःChuring of the city), 'द बेर्ड ऑफ़ गोल्ड एण्ड अदर स्टोरीस' (अनुवाद : The bird of gold and other stories), 'एकोस एण्ड षाडोस' (Echoes and shadows), 'डोगरी फ़ोक टेल्स' (Dogri folk tales)'उत्तरा' -I, और II, 'लिसण गेर्ल' (Listen Girl), 'आन अप्रोच टु हिस्टरी ऑफ़ पोस्ट ऑफ़ीस इन इंडिया एण्ड अदर एस्सेस' (one approach to history of post office in India and other essays), 'जम्मु मिसेलरी' (Jammu Miscellary), 'डोगरी साहित्य द इतिहास'(Dogri Sahitya Da itihas), 'डोगरी साहित्य - दर्शन', 'साहित्य परचोल', 'चेतन द चित्त कबरी', 'ओह बि दिन हाय!', 'मेकिंग ऑफ़ डोगरी लिटरेचर एण्ड अदर एस्सेस', 'आल इन द डाक- सम रिफ्लेक्शन्स एण्ड री-कलक्शन्स' (all in the dak- some reflections and recollections), 'पवर प्लोयिस'(Power ploys) आदि।

उपर्युक्त रचनाओं में 'डोगरी फ़ोक टेल्स' डोगरी भाषा की लोक कथाओं का अंग्रेज़ी अनुवाद है। 'एकोस एण्ड षाड़ोस' डोगरी की कुछ कहानियों का अनुवाद है। 'उत्तरा - I और II' उत्तर भारत की छः भाषाओं - काश्मीरी, पंजाबी, डोगरी, हिन्दी, उर्दू, राजस्थानी-का साहित्यिक सार है। यह केन्द्र साहित्य अकादमी का प्रकाशन है। डोगरी साहित्य द इतिहास, डोगरी साहित्य दर्शन, साहित्य परचोल, चेतन द दित्त कबरी - ये डोगरी भाषा में लिखित रचनायें हैं। 'डोगरी साहित्य दर्शन' श्री.एच.आर. पोड़ोत्रा के सहसंपादन में लिखा गया है। 'साहित्य परचोल' में 'परचोल' का मतलब है 'साहित्य के संबन्ध में बोलना'। 'केन्द्र साहित्य अकादमी पुरस्कार' प्राप्त रचना है 'चेतन द चित्त कबरी'। यह निबंधों, संस्मरणों, यात्रावृत्तों तथा

रिपोर्टों का संकलन है। 'ओह बि दिन हाय!' डोगरी में लिखित आत्मकथा है, जिसके दो भाग हैं। 'पवर प्लोयिस' (Power ploys) डोगरी से अंग्रेज़ी में अनूदित रचना है, जिसकी मूल रचना का नाम है 'रेशम द कीष़े' अर्थात् 'Silkworm'।

'लिसेण गेर्ल' (Listen girl) कृष्णा सोबतीजी की बहुचर्चित रचना 'ऐ लड़की' का अंग्रेज़ी अनुवाद है। इसमें शिवनाथजी ने आधुनिकता के सभी तत्वों से युक्त, मनोवैज्ञानिक तथा जटिल जीवन - यथार्थ प्रस्तुत करनेवाले श्रेष्ठतम हिन्दी उपन्यास को अंग्रेज़ी में अनुवाद करके हिन्दी के साहित्यिक - मूल्य की पहचान अंग्रेज़ी दुनिया को देने का महत्वपूर्ण कार्य किया है।

कृष्णाजी ने मौलिक कथा - रचनाएँ की हैं तो शिवनाथजी ने कथा - साहित्येतर गद्य विधाओं - जैसे निबंध, संस्मरण, इतिहास-लेखन आदि का मौलिक रूप से सृजन किया है। कृष्णाजी की भाषा हिन्दी है और आंचलिक रचनाओं जैसे - 'ज़िन्दगीनामा', 'मित्रो मरजानी' आदि उपन्यासों- में पंजाबी भाषा का प्रचुर प्रभाव है तो शिवनाथजी ने अंग्रेज़ी भाषा तथा पहाड़ी भाषा डोगरी में साहित्य-सृजन किया है। कृष्णाजी जैसे हिन्दी कथा - साहित्य के क्षेत्र में अनुपम हैं, वैसे शिवनाथजी डोगरी साहित्य में अनुपम हैं। अंग्रेज़ी भाषा को शिवनाथजी की देन भी महत्वपूर्ण है, खासकर 'ऐ लड़की' (कृष्णा सोबती) उपन्यास का अंग्रेज़ी अनुवाद 'लिसण गेर्ल'। कृष्णाजी और शिवनाथजी का जन्म दिन भी एक ही है।

◆पूर्व अध्यक्षा, हिन्दी विभाग,
सरकारी महिला कॉलेज,
तिरुवनन्तपुरम।
फोन-9946253648

Form IV

Statement about ownership and other particulars about the newspaper 'Shodh Sarovar Patrika' to be published in the first issue every year after the last day of February.

1. Place of publication - Thiruvananthapuram, Kerala.
2. Periodicity of publication - quarterly.
3. Printer's name - Dr.P.Letha
   Nationality - Indian
   Address- 'Arathi', TC14/1592, Forest Office Lane, E-28, Vazhuthacaud, Thiruvananthapuram, Kerala. PIN-695014.
4. Publisher's name- Dr.P.Letha
   Nationality - Indian
   Address- 'Arathi', TC14/1592, Forest Office Lane, E-28, Vazhuthacaud, Thiruvananthapuram, Kerala. PIN-695014.
5. Editor's name- Dr.P.Letha
   Nationality - Indian
   Address- 'Arathi', TC14/1592, Forest Office Lane, E-28, Vazhuthacaud, Thiruvananthapuram, Kerala. PIN-695014.
6. Name and addresses of individuals who own the newspsper and partner's or shareholders holding more than one percent of the total capital-
   Name- Dr.P.Letha
   Address- 'Arathi', TC14/1592, Forest Office Lane, E-28, Vazhuthacaud, Thiruvananthapuram, Kerala. PIN-695014.

I, Dr.P.Letha, hereby declare that the particulars given above are true to the best of my knowledge and belief.

Date : 26/03/2019 sd/-
Dr.P.Letha

कृष्णा सोबती और देश विभाजन से जुड़ी कहानी

♦ डॉ.एलिसबत्त जोज

हिन्दी कथा साहित्य में नारी चेतना के प्रखर वक्ता के रूप में ख्याति प्राप्त लेखिका हैं श्रीमती कृष्णा सोबती। नारी जीवन के विभिन्न पक्षों को पूरी यथार्थता के साथ अपनी रचनाओं में उजागर करने में वे सफल रही हैं। अपने ज़िंदादिल व्यक्तित्व, परंपरा से हटकर सोचने का साहस, अभिव्यक्ति के पंजाबी तेवर आदि उनकी खासियत है।

कृष्णा सोबती का साहित्य नारी जीवन के अनुभूत यथार्थ का साहित्य है। उनके 6 उपन्यास, 2 लंबी कहानियाँ और एक कहानी संकलन प्रकाशित हुए हैं। उनका संपूर्ण कथा साहित्य नारी केन्द्रित सच्चा साहित्य है। नारी जीवन की विभिन्न समस्याओं को, अनछुए प्रसंगों और अनकहे रहस्यों को उद्‌घाटित करने के कारण उनकी रचनाएं विवादों को आमंत्रित करती रहती थीं। नारी शोषण, अस्तित्व संकट, अस्तित्व की तलाश, नारी सजगता आदि इनकी रचनाओं के विषय रहे हैं। पुरुष समाज द्वारा शोषण का शिकार बनकर हालत के सामने आत्मसमर्पण करनेवाली नारी का चित्र उन्होंने प्रस्तुत किया है। दूसरी तरफ, सबल एवं सशक्त नारी पात्र की सृष्टि भी उन्होंने की है। नैतिकता - अनैतिकता के दायरे से ऊपर उठकर नारी जीवन के यौन पक्ष को अभिव्यक्त करके परंपरागत सामाजिक संस्कारों पर उन्होंने प्रहार किया। 'बोल्ड लेखिका' पर श्री नरेन्द्र मोहन ने इसप्रकार टिप्पणी की है - "बोल्डनेस, कहानीकार की रचनात्मक साहसिकता है जिसे कहानी की टॉन, कथ्य निरूपण, शैली और भाषा में देखा जा सकता है।" कृष्णा जी ने अपने पहले उपन्यास में पुरुषों द्वारा शोषित नारी की व्यथा को प्रस्तुत किया तो 'सूरजमुखी अँधेरे के' नामक उपन्यास में बचपन में हुई एक दुर्घटना (बलात्कार) से उत्पीड़ित नारी - मानसिकता का मनोवैज्ञानिक चित्रण प्रस्तुत किया। 'मित्रो मरजानी' उपन्यास में नारी की काम वासना जैसे विषय की प्रस्तुति उनकी बोल्डनेस का प्रमाण है। मित्रो जैसा सशक्त, निडर एवं विवेकशील नारी पात्र पूरे हिन्दी साहित्य के इतिहास में दुर्लभ है।

कृष्णा सोबती ने अपनी कहानियों के लिए नारी जीवन की विभिन्न समस्याओं को कथ्य के रूप में चुना था। मातृत्व की पीड़ा, बुढ़ापे की एकांतता, अकेलापन, देश-विभाजन की त्रासदी जैसे विविध विषय नारी केन्द्रित कथाओं में गहरी संवेदना के साथ प्रस्तुत किये गये है।

कृष्णा सोबती की सबसे लोक प्रिय कहानी है - 'सिक्का बदल गया'। यह पहली बार सन् 1948 में अज्ञेय के संपादकत्व में निकली 'प्रतीक' पत्रिका में प्रकाशित हुई थी। कृष्णा जी के कहानी-संकलन 'बादलों के घेरे' में यह कहानी संकलित है। देश विभाजन से

जुड़ी समस्याओं को नारी पात्र के ज़रिए कहानी में उजागर किया गया है। देश विभाजन से उत्पन्न त्रासद परिस्थितियों में मानवीय मूल्यों की अर्थशून्यता और संबन्धों के खोखलेपन का हृदयस्पर्शी चित्रण हुआ है।

कहानी का मुख्य पात्र शाहनी नामक वृद्धा है। पचास वर्ष पहले वह चेनाब नदी के किनारे दुलहन बनकर आयी थी। तब से वह ज़मीन, खेती और हवेली उसके जीवन के हिस्से बन गयी थीं। पति और पुत्र की मृत्यु के बाद गाँववाले ही उसके रिश्तेदार थे। लेकिन देश का विभाजन दिलों में भी दरारें डालता है जो सारे रिश्तों-नातों को निरर्थक साबित करता है। जो आदमी (शेरा) शाहनी के आश्रय में पलकर बड़ा हुआ था, वही उसकी हवेली लूटने की साजिशें करता है। हिन्दू परिवारों को सीमा पार ले जाने के लिए ट्रकें आती हैं तो शाहनी अपने पुरखों की ज़मीन छोड़कर जाना नहीं चाहती। आखिर वह सबको आशीष देकर वहाँ से विदा लेती है।

कृष्णा सोबती ने कहानी की रचना में अपने जीवनानुभवों को ही आधार बनाया था। उनका जन्म पंजाब के उस हिस्से में हुआ था जो अब पाकिस्तान में है। देश-विभाजन की घटना से लेखिका के मन को गहरी चोट लगी थी। उन्हें उस वक्त लाहोर के कॉलेज से पढ़ाई छोड़कर दिल्ली आना पड़ा था।

देश-विभाजन की पीड़ा शाहनी की वाणी द्वारा व्यंजित करने में कहानीकार सफल हुई हैं -"समय बदल गया है... राज पलट गया है - सिक्का क्या बदलेगा। वह तो मैं वहीं छोड़ आई।" शाहनी जैसी मनुष्य स्नेही, ममतामयी माँ के लिए देश-विभाजन दिलों को तोड़नेवाली वेदना देता है।

देश-विभाजन भारतीय इतिहास की सबसे त्रासद घटना थी। पुरुष लेखकों द्वारा इस विषय पर काफी रचनाएँ प्रकाशित हुई हैं। लेकिन एक महिला कथाकार द्वारा ऐसी प्रस्तुति पहली बार हुई है।

संदर्भ

1. बीसवीं शताब्दी का उत्तरार्द्ध - हिन्दी कहानी - नरेन्द्र मोहन, पृ.सं.58।
2. बादलों के घेरे - कृष्णा सोबती, पृ.सं.128।

सहायक ग्रंथ

कृष्णा सोबती-व्यक्ति एवं साहित्य - डॉ.ब्रिजित पॉल, जवाहर पुस्तकालय, मथुरा।

♦ असिस्टन्ट प्रोफसर
सरकारी वनिता कॉलेज
तिरुवनन्तपुरम।
फोन - 9495606105

2018 सितंबर में केरल विश्वविद्यालय द्वारा चलायी गयी एम.ए हिन्दी परीक्षा में सर्व तृतीय आयी यूनिवर्सिटी कॉलेज, तिरुवनन्तपुरम की अमृता सी.एल। चेंकोट्टुकोणम ऐरत्तु के निवासी और स्वर्गीय टी.चन्द्रन तथा श्रीमती लता की बेटी है।

प्रलय प्रकोप

♦ **अनामिका अनु**

समुद्र की श्वेत बाँहों में-
फैला हरा गाँव है,
'केरल'-साहित्य, संस्कृति
और प्रकृति का पड़ाव है।

डूबकर अस्त हो जाना जीवन का
करुणामय था न केरल?
बारिश तो बहाना था,
गाँव, कस्बे, शहर- सब डूब जाना था।

क्या बनाने के चक्कर में क्या बिगाड़ते रहे,
अंदर और बाहर की हरियाली को काटते रहे।
मौसम और मिज़ाज इस कदर बिगड़ने लगे हैं,
दिल दिलेरों के भी अब पिघलने लगे हैं।
रोई है प्रकृति आज ज़ोर-ज़ोर करके,
बदराई आँखें बरसी हैं बेज़ार हो करके।

ईमान, वसूल, भरोसा - कच्चे ताखों पर रह गये,
घरआँगन, सड़क, मन - सब पक्के के हो गये।
मिट्टी है कहाँ इतनी जो बारिश को सोख लें।
साधन हैं कहाँ जो उमड़ती ख्वाहिशों को रोक लें।

भीतर और बाहर कचरे का ज़खीरा है।
पानी को रास्ता मिलने में भी बखेड़ा है।
नदी, नाले, पोखर- सब भरे प्लास्टिक से,
बारिश का पानी कहाँ जाए वास्तविक में।

वो बारिश, बाढ़ और बिखराव,
लोगों की राहत कैंपों में पड़ाव।
खेत-खलिहान, अस्पताल, विद्यालय, व्यापार,
सब कुछ बहा ले गया।

बहा ले गया व्यवहार भी,
डूबते पर ये कटाक्ष तुम्हारे।
भाषा, भोजन और भावनाओं पर,
गिरता संवाद हमारा।
दर्द केरल या किसी का भी हो,
यह अच्छा होता कि मर्मस्पर्श सभी का हो।

दर्द के उमड़ते आँसू ने खोल दिये
सब बाँध आँखों के।
घोंसले टूटते रहे सब शाखों के।
पर टूटा घर नहीं छोड़ा संयम,
तो फिज़ा यूँ न बदलती रंग जीवन का।
और न डूबता,
तेरा, मेरा, सबका- देश देवों का।

उम्मीद और विश्वास सब हिले पड़े थे।
ज़मीन में पाँव जमाए और हाथ बढ़ाए
कुछ लोग खड़े थे।
जिन हाथों को थामकर सब पार हुए,
उन हौसलों को मिलकर आभार कहें।

♦ मंजुल निलय
लेन संख्या 3, शिवपुरी,
दामुचौक, मुजफ्फरपुर
बिहार-842001
फानेः 8075845170

श्रद्धांजलियाँ

4 फरवरी 2019 को पुलवामा (श्रीनगर) में आतंकवादियों के आक्रमण में भारत माता के लिए **शहीद हुए 40 सी आर पी एफ सैनिकों** का 'अखिल भारती हिन्दी अकादमी' के सदस्य श्रद्धासिद्ध नमन करते हैं।

डॉ.नामवर सिंह

बहुचर्चित हिन्दी आलोचक स्वर्गीय डॉ.नामवर सिंह का जन्म 28 जुलाई 1926 को बनारस (वर्तमान चंदौली जिला) के जीयनपुर गाँव में हुआ। लंबे समय तक 1 मई 1927 को उनकी जन्म तिथि मानी जाती थी। नामवरजी ने खुद भी ऐसा ही माना था। लेकिन बाद में ही पता चला कि यह स्कूल में भरती होने के समय लिखवाई गयी तिथि है।

नामवरजी हिन्दी में एम.ए.तथा पी एच.डी उपाधियाँ प्राप्त करने के बाद बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय (काशी) में अध्यापक बने। लेकिन सन् 1959 में संसद के चुनाव में चकिया चन्दौली में भारतीय कम्युनिस्ट पार्टी के उम्मीदवार बने तो बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय की नौकरी छोड़नी पड़ी। उन्होंने क्रमशः सागर विश्वविद्यालय तथा जोधपुर विश्वविद्यालय में भी अध्यापन किया। उसके बाद जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय में अध्यापक नियुक्त हुए। अवकाश प्राप्त करने के बाद भी वे उसी विश्वविद्यालय में इमेरिट्स प्रोफेसर रहे। 1993 - 1996 काल में 'राजा राम मोहनराय पुस्तकालय प्रतिष्ठान' के अध्यक्ष रहे। फिर 'महात्मागाँधी अंतर्राष्ट्रीय हिन्दी विश्वविद्यालय, वर्धा' में कुलाधिपति नियुक्त हुए।

नामवरजी हिन्दी के अतिरिक्त उर्दू एवं संस्कृत भाषाएँ जानते थे। वे अच्छे वक्ता थे। उनके व्याख्यान में भाषा-प्रवाह के साथ विचारों की लय भी होती थी। हिन्दी के सर्वोत्तम आलोचक नामवर सिंह ने लेखन की शुरुआत कविता से की। उनका साहित्यिक व्यक्तित्व बहुआयामी रहा। व्यक्तिव्यंजक निबन्धों का संग्रह 'बक़लम खुद' (1951) लंबे समय तक अनुपलब्ध था। यह सन् 2013 में 'भारत यायावर' के संपदकत्व में निकली पुस्तक 'प्रारंभिक रचनाएँ' में नामवरजी की उपलब्ध कविताओं तथा विविध विधाओं की गद्य रचनाओं के साथ संकलित होकर पुनः सुलभ हो गया। उनके प्रकाशित शोध ग्रंथ हैं- (1) 'हिन्दी के विकास में अपभ्रंश का योग' (1952), जो पुनर्लिखित रूप में सन् 1954 में निकला। (2) 'पृथ्वीराज रासो की भाषा' (1956), जिसका संशोधित संस्करण है 'पृथ्वीराज रासोः भाषा और साहित्य'।

नामवरजी के प्रकाशित आलोचना ग्रंथ हैं - आधुनिक साहित्य की प्रवृत्तियाँ (1954), छायावाद (1955), इतिहास और आलोचना (1957), कहानी - नयी कहानी (1964), कविता के नये प्रतिमान (1968), दूसरी परंपरा की खोज (1982), वाद विवाद संवाद (1989) आदि। उनके प्रकाशित साक्षात्कार हैं - 'कहना न होगा' (1994) और 'बात बात में बात' (2006)। व्याख्यानों का संकलन है 'आलोचक के मुख से' (2005)। उनके अप्रकाशित तथा असंकलित लेखन पर आधारित पाँच पुस्तकें सन् 2018 में प्रकाशित हुई हैं - (1) आलोचना और संवाद, (2) पूर्व रंग, (3) द्वाभा, (4) छायावादः प्रसाद, निराला, महादेवी और

पंत, (5) रामविलास शर्मा आदि।

नामवर सिंह द्वारा जवहरलाल नेहरू यूनिवर्सिटी में दिये गये नोट्स उनके तीन छात्रों - शैलेशकुमार, मधुप कुमार एवं नीलम सिंह - के संपादन में 'नामवर सिंह के नोट्स' नाम से प्रकाशित हुआ।

नब्बे वर्ष की अवस्था पूर्ण करने पर प्रकाशित नामवरजी की दो पुस्तकें 'आचार्य हज़ारीप्रसाद द्विवेदी की जय यात्रा' तथा 'हिन्दी समीक्षा और आचार्य शुक्ल' पूर्व प्रकाशित रचनाओं का ही एकत्र प्रस्तुतीकरण है। नामवरजी के संपूर्ण लेखन तथा उपलब्ध व्याख्यान इन पुस्तकों में शामिल हैं। नामवरजी ने आठ पुस्तकों का संपादन किया। नामवरजी पर विविध विद्वानों द्वारा लिखित नौ पुस्तकें प्रकाशित हैं।

नामवरजी ने अध्यापन एवं लेखन के अलावा 1965-1967 काल में 'जनयुग' (साप्ताहिक) और 1967-1990 काल में 'आलोचना' (त्रैमासिक) हिन्दी पत्रिकाओं का संपादन किया।

डॉ.नामवर सिंह की प्रकाशित रचनाओं पर ध्यान देने से यह कहा जा सकता है कि 'उन्होंने जितना लेखा वह हिन्दी साहित्य में इतिहास और आलोचना के क्षेत्र में नया मानदंड़ प्रस्तुत करने के सदृश था।' वे विचारों से मार्क्सवादी थे। एक मार्क्सवादी होने के नाते उन्होंने जीवन भर आत्मालोचन को स्वीकार किया।

डॉ.नामवर सिंह दक्षिणी दिल्ली में अलकनंदा आपार्टमेंट में अपने परिवार के साथ रहते थे। वे 15 जनवरी 2019, सोमवार को रात्रि भोजन के बाद सो रहे थे कि करीब 2.00 बजे खाट से गिरे। उन्हें नज़दीकी निजी अस्पताल में भरती करायी गयी। गिरने के कारण मस्तिष्क में चोट लगी। सी.टी.स्कान में पता चला कि मस्तिष्क में खून का थोड़ा थक्का जम गया है। ब्रेन हेमरेज से पीड़ित नामवरजी अगले दिन बेहतर इलाज केलिए 'एम्स' (दिल्ली) में भरती कराये गये। उनके रोग की खबर से हिन्दी साहित्य जगत दुःखी था कि 19 फरवरी 2019 की रात को उनका निधन हुआ।

उन्हें प्राप्त सम्मान हैं - 'कविता के नये प्रतिमान' केलिए 'साहित्य अकादमी पुरस्कार' (1971); हिन्दी अकादमी, दिल्ली की ओर से 'शलाका सम्मान', उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान की ओर से 'साहित्य भूषण सम्मान', शब्द साधक शिखर सम्मान (2010), 'पाखी' तथा इंडिपेंडेंट मीडिया इनशेटिव सोसाइटी की ओर से 'महावीर प्रसाद द्विवेदी सम्मान' (2010) आदि।

डॉ.नामवर सिंह हिन्दी आलोचना के क्षेत्र में नये प्रतिमान बने आलोचक हैं। सचमुच वे नामवर आलोचक थे। स्वर्गस्थ हुए प्रिय लेखक को 'अखिल भारतीय हिन्दी अकादमी' के सदस्य श्रद्धांजलि अर्पित करते हैं।

सूचना

NET (हिन्दी) तथा Spoken Hindi की कक्षाओं में प्रवेश पाने को इच्छुक व्यक्ति संपर्क करें -

फोन : 9946253648, 0471 - 2332468

मुद्रक तथा प्रकाशक डॉ.पी.लता, आरती, टी.सी. 14/1592, फोरस्ट ऑफिस लेन, वषुतक्काटु, तिरुवनन्तपुरम -14 द्वारा अबी प्रकाशन एन्ड प्री-प्रेस, करुमम्, तिरुवनन्तपुरम -2 में मुद्रित तथा डॉ.पी.लता द्वारा संपादित

Printed & Published by Dr.P.Letha, Arathi, T.C. 14/1592, Forest Office Lane, Vazhuthacaud, Thiruvananthapuram -14, Printed at Abi Design & Pre-Press, Karumom, Thiruvananthapuram -2 & Edited by Dr. P. Letha